धन्यवाद

सेठ नवरत्नमलजी रीयाँ वाले मोती कटला अजमेर, श्वेताम्बर स्थानक वासी जैन समाज में एक धर्मात्मा और दानशील व्यक्ति हैं। आपकी ३८ वर्ष की आयु है। आप अखिल भारत वर्षीय श्री साधु सम्मेलन जो अजमेर में हुआ था, उसके स्वागत समिति के सभापति हुये थे और श्री श्वे० स्थानक वासी जैन कान्फरेन्स के मेम्बर भी हैं। आपके दादा श्री का शुभ नाम राय सेठ चांदमल जी और पिता श्री का नाम सेठ घनश्यायदासजी था। इन दोनों के स्वर्गवास के बाद उक्त सेठ नवरत्नमलजी साहब ने अपने कारोबार को पूर्ववत् सुचारू रूप से चला रक्खा है। इन्होंने सन् १९३८ ई० में जब अनासागर सूख गया था, तब उसके लाखों जीवों को बुड्ढे पुष्कर पहुँचा कर उनको अभयदान देकर उनके प्राणों की रक्षा की थी तथा दयालुता का परिचय दिया था।

श्री सेठ नवरत्नमलजी साहब के दो पुत्र हैं जिनका शुभ नाम कंवर बल्लभदासजी व कंवर सूरजमलजी है और आपके दो पुत्रियां भी हैं। सेठ साहब ने यह पुस्तक अपने व्यय से छपवा कर श्री जैन साहित्य प्रचारक समिति को अर्पण की है। इसके लिये आपको शतशः हार्दिक धन्यवाद है।

मंत्री—

श्री जैन साहित्य प्रचारक समिति ब्यावर

भजन-पुष्प-वाटिका

संघी मोतीलाल मास्टर
चोमनाला

सेठ नवरत्नमलजी रीयाँ वाले अजमेर

भूमिका

हमारे लिए आज यह एक महान् गौरव का विषय है जो हमें मुनि श्री पूनमचन्द्रजी महाराज संग्राहक भजन-पुष्प वाटिका की भूमिका लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस पुस्तक में कई प्रकार की तर्जों में भजन लिखे गये हैं। जिसके पढ़ने से मन को शांति प्राप्त होती है। वैराग्य भाव उत्पन्न होते हैं, धर्म में दृढ़ श्रद्धा हो जाती है, और पाखण्डियों की पोल मालूम हो जाती है। मेरा तो अनुरोध है कि पाठकगण इस भजन पुष्प-वाटिका को आद्योपान्त पढ़कर लाभ उठावें और लेखक के परिश्रम को सफल करें।

सन् १९३९
केसरगंज
अजमेर

विनीत
निरोतीलाल जैन

अनुक्रमणिका

भजन पुष्प-वाटिका

प्रथम-भाग

देव-वन्दन

१—अरिहंत-स्तुति ॥

[तर्ज़—जीवरे तू शियल तणो कर संग]

मनाऊं मैं तो श्री अरिहंत महन्त ।
तरु अशोक जाको अवलोकत, शोक समूह नशन्त ।
सुरकृतवाण वरणके नभ से, अचित सुमन बरसन्त—म. ॥१॥
अर्धमागधी वाणी जाकी, योजन इक पर्यन्त ।
सुनत अमरनर पशु हिलमिल के, समझ सुबोध लहत—म. ॥२॥
मुनि मन समसित चमर अमर गण, प्रमुदित व्हैढारंत ।
स्फटिक रत्न के सिंहासन पर, त्रिजगपतिराजंत—म. ॥३॥
प्रभावलय तम प्रलय करन हित, दिनकर सम दमकत ।
प्रष्ट भाग रही प्रभुजी कैसो, प्रबल प्रकाश करंत—म. ॥४॥

गगन मांही घन गर्जारवसम, दुंदुभि शब्द बजन्त ।
तीन छत्र सिर सोहे ताते, तू त्रिभुवन को कंत—म. ॥५॥
तव सुमिरे सुख सम्पति पावे, सुरनर पाय प्रणमन्त ।
अष्ट सिद्धि नव निधि घर प्रगटे, तेरो जाप जपत—म. ॥६॥
माधव मुनि कर जोड़ वीनवे, विनय सुनो भगवन्त ।
ऋद्धि वृद्धि बुद्धि वैभव देवो, अरु सुख सादि अनन्त—म. ॥७॥

२—सिद्ध भगवान की स्तुति ॥

[तर्ज—श्री महावीर नमो वरनाणी, शासन जेहनो जाण रे प्राणी]

सेवो सिद्ध सदा जयकार जासें होवे मंगलाचार-टेर

अज अविनाशी, अगम, अगोचर, अमल, अचल, अविकार ।
अन्तर्यामी, त्रिभुवन स्वामी, अमित शक्ति भंडार—सेवो. ॥१॥
कर पणट्ठ कमट्ठ, अट्ठ गुण, युक्त मुक्त ससार ।
पायो पद परमिट्ठ ताम पद, वंदूँ वारवार—सेवो. ॥२॥
सिद्ध प्रभु को सुमिरण जग में, सकल सिद्धि दातार ।
मन वांछित पूरन सुरतरु सम, चिंता चूरन हार—सेवो. ॥३॥
जपे जाप योगीश रात दिन, ध्यावे हृदय मंझार ।
तीर्थंकर हू प्रणमें उनको, जब होवे अनगार—सेवो. ॥४॥
सूर्योदय के समय भक्ति युत, थिर चित्त दृढ़ता धार ।
जपे सिद्ध यह जाप तासु घर, होवे ऋद्धि अपार—सेवो. ॥५॥
सिद्ध स्तुति ये पढ़ें भाव सें, प्रति दिन जो नर नार ।
सो दिव शिव सुख पावे निश्चय, वने रहें सरदार—सेवो. ॥६॥
माधव मुनि कहे सकल सब में, वढ़े हमेश पियार ।
विद्या विनय विवेक समन्वित, पावे प्रचूर प्रचार—सेवो. ॥७॥

3—चतुर्विंशति जिनस्तवन ॥

[तर्ज-पंजाबी-वीरो कर देना०]

रसने ! रट लेना, सदा सुखद शुभ नाम-रसने-टेर
ऋषभ अजित संभव भयहारी, अभिनन्दन नंदनताकारी
सुमति सदा अभिराम, रसने ! रटलेना० ॥ १ ॥
पद्म सुपार्श्व दयाके सागर, चंदा प्रभु तिहुँ जगत उजागर
पुष्पदंत निष्काम. रसने ! रट लेना० ॥ २ ॥
श्री शीतल श्रेयांस मुनीश्वर, वासु पूज्य गभीर गुणीश्वर
विमल विमल गुण धाम, रसने ! रट लेना० ॥ ३ ॥
नाथ अनंतजी अविचल ध्यानी, धर्म शान्तिवर केवलज्ञानी
हों दुखदूर तमाम, रसने ! रट लेना० ॥ ४ ॥
कुंथु अरह मल्लि जिन स्वामी, मुनि सुव्रत नमि नेमि सुनामी
कर रटके गुण ग्राम, रसने ! रट लेना० ॥ ५ ॥
पार्श्वनाथजी नाग बचैया, वीर अहिंसा नाद बजैया
भजले आठों याम, रसने ! रट लेना० ॥६ ॥
सीधे मग पर अबतो होले. पाप कालिमा अपनी धोले
करले विश्व गुलाम, रसने ! रट लेना० ॥ ७ ॥

४—भक्त कथन ॥

[तर्ज—कव्वाली]

अगर जिन देव के चरणों में तेरा ध्यान हो जाता
तो इस संसार सागर में, तेरा उद्धार हो जाता ॥ १ ॥

न होवी जगत् में ख्वारी, न बढ़ती कर्म बीमारी
जमाना पूजता सारा, गले का हार हो जाता ॥ २ ॥
रोशनी ज्ञान की खिलती, दिवाली दिल में हो जाती
हृदय मन्दिर में भगवन् का, तुझे दीदार हो जाता ॥ ३ ॥
परेशानी न हैरानी, दशा हो जाती मस्तानी ;
धर्म का प्याला पी लेता, तो बेड़ा पार हो जाता ॥ ४ ॥
जमीं का बिस्तरा होता, व चादर आसमां बनता
मोक्ष गद्दी पे फिर प्यारे, तेरा निवास हो जाता ॥ ५ ॥
चढ़ाते देवता तेरे, चरण की धूल, मस्तक पर
अगर जिन देवकी भक्ति में, मन इकतार हो जाता ॥ ६ ॥
राम जपता अगर माला का, मनका एक भक्ति से
तो तेरा घर हो भक्तों के, लिए दरबार हो जाता ॥ ७ ॥

५—जिनेश्वर स्तुति ॥

[तर्ज़—इत्थे रहना नहीं कर तू यकीन गलदा]

सानु जिनवर प्यारेदा दीदार चाहिदा
नाले होना भी दीदार हर वार चाहिदा—टेर
वगे पौन पाप वाली बड्डे जोर शोर से
बेड़ा धर्मवाला होना साढ़ा पार चाहिदा—सानु. ॥१॥
साढ़ी कौम कुम्भकरण वाली नींद सोंवदी
करना सुत्ती पई क़ौमनूँ बेदार चाहिदा—सानु. ॥२॥
काम क्रोध लोभ आये वड्डी फौज जोड़ कर
सानु जिनवर जेहा सरदार चाहिदा—सानु. ॥३॥

एहो आखदा कमल दोए हत्थ जोड़ के
कर्म सेवकांते होना सरकार चाहिदा-सानु. ॥४॥

६—भगवान ऋषभदेवजी ॥

[तर्ज़—रघुबर कौशल्या के लाल, मुनि का यज्ञ रचाने वाले]

भगवन् मरुदेवी के लाल, मुगत की राह बताने वाले
राह बताने वाले, सबका भ्रम मिटाने वाले ॥ भग०—टेर ॥
लीना अवधपुरी अवतार, छा गयो जग में आनन्दकार।
बोले सुरनर जय जयकार, भारे जिन गुण गाने वाले-भग० ॥१॥
जग में था अज्ञान महान, तुमने दिया सबों को ज्ञान।
कराके मिथ्यामत का भान, केवल ज्ञान उपाने वाले-भग० ॥२॥
तुमने दिया धरम उपदेश, जामें राग द्वेष नहीं लेश।
तुम सब ब्रह्मा, विष्णु महेश, शिव मारग दर्शाने वाले-भग० ॥३॥
जग जीवन पे करुणा धार, तुमने दिया मन्त्र नवकार।
जिससे होगा भवदधि पार, लाखों निश्चय लाने वाले-भग० ॥४॥
वैरी करम बड़े बलवीर, देते सब जीवों को पीर।
न्यामत हो रहा अधर्म अधीर, तुमही धीर बंधाने वाले-भग० ॥५॥

७—ईश प्रार्थना ॥

[तर्ज़—पपीहा काहे मचावे शोर]

सुमति देवो सुमति नाथ भगवान ॥ टेर ॥
बिना सुमति श्री संघ मांहि हा, हो रही खींचातान।
खींचातान मे ज्ञान ध्यान का, हो रहा अवसान ॥१॥

करें परस्पर निंदा स्वामिन्, देवे अभ्याख्यान ।
इन वार्तों से जैन धर्म का कैसे हो उत्थान ॥२॥
आत्म श्लाघा कारण कर रहे, जप तप धर्म्म ध्यान ।
आशसायुत धर्म्मक्रिया से, क्या होगा कल्यान ॥३॥
परवंचन वैराग्य प्राय है, जन रंजन व्याख्यान ।
विद्यावाद काज सीखें हा, मुनिवर हैं जगभान ॥४॥
कूद पड़े हैं साधु समर में, हो मदान्ध धनवान ।
उभय पक्ष की ओर शोर से, चल रही कलम कृपान ॥५॥
छल कुयुक्ति के अस्त्र शस्त्र ले, श्राद्ध सुभट बलवान ।
जैन सैन्य पंच लक्ष का, करते हैं घमसान ॥६॥
देख दशा यह जैन धर्म्म की वैधर्म्मी विद्वान ।
करते हैं उपहास प्रभा अब, कुछ कर अनुसंधान ॥७॥
सुमति सदा दिवशिव सुखदाई, कुमति क्लेश की खान ।
कर करुणा अतएव प्रभो अब, कीजे सुमति प्रदान ॥८॥

८—श्री शांतिनाथ भगवान ॥

[तर्ज़—तरकारी लेलो, मालण आई बीकानेर की]

श्री शांतिनाथजी, साता वरताई संसारजी
मनमोहन गारा, जप दिया मगला चारजी—टेर ॥
वसु सेन नृप अचिरा अंगज, चव्याशान्ति कुमार
शांति थई सहु देश में कांई, मिरगीमार निवारजी-श्री० ॥१॥
धौ धौं धप मप मादल वाजे, नाटकना धमकार
सुगुरु सुजान सुगुरु जिन महिमा, बोल रहे नरनारजी-श्री० ॥२॥

कामन टोमन टोटकास कोई, खांस खेन हुंकार
ताव तेजरो निकट न आवे, त्रुठे शान्तिजी वारजी-श्री० ॥३॥
विष प्याला अमृत होय पगमे, अग्नि होवे छार
दोषी दुश्मन चोरटास कोई, नहीं आवे घर द्वारजी-श्री० ॥४॥
शान्ति नाम तावीज हिये लिख, भव दुःख भंजन हार
मगन शान्तिता वरते निशदिन, शांति उतारे पारजी-श्री० ॥५॥

६—प्रभु मल्लिनाथ ॥

[तर्ज़—इतना तो करना स्वामी जब प्राण तन से निकले]

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी-टेक ॥

जग की वनस्थली में, हम मोर वन के नाचें ।
तुम मेघ वन के आना, सूखी पड़ी है क्यारी-प्रभु०॥१॥
जग के सरोवरों में, हम फूल वन खिलेंगे ।
तुम सूर्य वन के आना, अँधियारी रात कारी-प्रभु०॥२॥
फूले फले अनूठे, उद्यान हम वनेंगे ।
ऋतुराज वन के आना, शोभा वने निराली-प्रभु०॥३॥
वन कर चकोर स्वामी; देखेंगे राह तेरी ।
तुम चन्द्र वनके आना, निरखें छटा तुम्हारी-प्रभु०॥४॥
हम दीन हीन वन कर, दर पर खड़े रहेंगे ।
दातार वनके आना, हमको समझ दुखारी-प्रभु०॥५॥
संसार में हमारे, गुरुदेव. हैं सहारे ।
सवको इन्होंने तारे, अवकी हमारी वारी-प्रभु०॥६॥

धन तात 'कुंभ, माता,-'परभावती,' के प्यारे।
'अय! 'सूर्यभानु, मेरे, मन में बसो बिहारी-प्रभु०॥७॥

१०—भगवान नेमनाथ और सारथी (ड्रामा)

नेमि प्यारे आंख के तारे, क्यों चले गिरनारजी-टेर॥
नेम० पशुओं की चीख सुनी दिल हुआ पानी,
बात ये सच्ची मैंने जानी।
यह दुनियां मतलब की फ़ानी,
इससे कैसा प्यार जी-ने०॥१॥
सार० हाथ में कंगना कैसा सुहाया,
शीश मुकुट लख इन्द्र लजाया।
करो राज्य भोगो यह माया,
प्रजा गले के हारजी-नेमि०॥२॥
नेम० लाख चोरासी भव भव रुलियो,
बड़े पुण्य यह अवसर मिलियो।
छलो न अब बन करके छलिया,
पाने दो भव का पारजी-नेमि०॥३॥
सार० शंख अर्धचक्री का बजाया,
उंगली के बल से कृष्ण लजाया।
बलधारी तुमसा नहिं पाया,
करो राज्य सुखकार जी-नेमि०॥४॥
नेम० इस दुनिया में के दिन जीना,
दिन दिन यह तन होवे क्षीना।

अमृत छोड़ जहर नहीं पीना,
येही धर्म का सार जी ॥नमि०॥५॥

सार० बाल उमर अरु कोमल काया,
तप है मुश्किल नेमिराया।
इसीलिये दिल है गभराया,
वही अश्रु की धारजी ॥नेमि०॥६॥

नेम० मोह को अपने छोड़ सारथी,
भव बंधन को तोड़ सारथी।
मुक्ति गली रथ मोड़ सारथी,
राम हो वेड़ा पार जी ॥नेमि०॥७॥

११—धन्य महावीर ॥

[वज़ं—सिमर नर महावीर भगवान्]

धन्य तुम महावीर भगवान्!

लिया पुण्य अवतार जगत् का, करने को कल्याण ॥१॥

विल विलाट करते पशु कुल को, देख दयामय प्राण।
परम अहिंसामय सुधर्म की, डाली नींव महान ॥२॥

ऊँच नीच के भेद भाव का, चढ़ा देख परिमाण।
सिखलाया सबको स्वाभाविक, समता तत्त्व प्रधान ॥३॥

मिला समोसरण में सुरनर पशु, सबको सम सम्मान।
समता औ उदारता का यह, कैसा सुभग विधान ॥४॥

अन्धी श्रद्धा का ही जग में, देख राज्य बलवान्।
कहा, न मानो बिना युक्ति के, कोई वचन प्रमाण ॥५॥
जीव समर्थ स्वयं, करता है, स्वतः भाग्य निर्माण।
यों कह स्वावलम्ब स्वाश्रय का, दिया सुफल प्रद ज्ञान ॥६॥
इनहीं आदर्शों के सन्मुख, रहने से सुख खान।
भारतवासी एक समय थे, भाग्यवान गुणवान ॥७॥

१२—महावीर किसके लिये ?

[तर्ज—सुर्खरू होता है इन्सां, आफ्तें सहने के बाद]

वीर भगवन् है हुए, पैदा जमाने के लिये
भव्य जीवों को चौरासी, से छुड़ाने के लिये—टेक
अष्ट जाति कलश को, है गंगा के जल से भरा
त्रिशला माता के दुलारे, को नहाने के लिये। वीर. ॥१॥
मेरु के ऊपर हैं मिलकर, चौसठ इन्द्र आ गये
वीर भगवन् का जनम, उत्सव मनाने के लिये। वीर. ॥२॥
इन्द्र ने शंका करी जब, छोटा बालक देखकर
मेरु को कंपा दिया, शंका मिटाने के लिये। वीर. ॥३॥
एक बरसी दान देकर, तज दिया घर बार को
इस अनादि से करम दल, को खपाने के लिये। वीर. ॥४॥
एक ग्वाले ने प्रभु के, खीर पावों में धरी
जो कि आया था वहां, गौवां चराने के लिये। वीर. ॥५॥

उफ तलक बिल्कुल नहीं, कीनी प्रभुजी ने वहां
आतमा से करम का, परदा हटाने के लिये। वीर. ॥६॥
द्वादशांगी वाणी की, रचना प्रभुजी ने करी
भूले भटके जीवों को, रास्ता बताने के लिये। वीर. ॥७॥
है अनन्ते भव्य जीवों को, पहुँचाया मोक्ष में
तेरा सुन्दर है तड़पता, मोक्ष पाने के लिये। वीर. ॥८॥

१३—ब्रह्मज्ञानी महावीर ॥

[तर्ज़—वश में होते आये भगवान भगत के०]

इक ब्रह्मज्ञानी आयासी, इस भारत में—टेक
क्षत्रिय वंशमें लिया अवतारा, सुर-नर, मुनिवर सेवक सारा
घर घर मंगल गायासी, इस भारत में—इक. ॥१॥
दुर्दशा देख भारत की प्यारे, हिंसा का जो था परचारे
देख दया दिललाई सी, इस भारत में—इक. ॥२॥
राज पाट सब छोड़ा सारा, दिया दान अरबों का भारा
ऋषि मुनि कहलाया सी, इस भारत में—इक. ॥३॥
बारह वर्ष तप घोर कमाये, बेसुमार प्रभु संकट पाये
फिर ब्रह्म ज्ञान जो पायासी, इस भारत में—इक. ॥४॥
अमृतमय उपदेश तुम्हारा, जिसने सुना झट दिल में धारा
तेरी शरन में आया सी, इस भारत में—इक. ॥५॥
तुम हो शरणाधारक स्वामी, गये मोक्ष हो अन्तर्यामी
फिर आवागमन मिटायासी, इस भारत में इक. ॥६॥

स्वर्ग मोक्ष के आनन्द पाओ, महावीर के सब गुण गाओ
जिसने धरम सिखायासी, इस भारत में-इक. ॥७॥

१४—वीर जयन्ति ॥

[तर्ज—दुनिया में देखो सैकड़ों आए चले गए]

जिन देव का संदेश जगत् को सुनाइए।
पावन परम पिता का सुयश गान गाइए—टेर॥
हिंसा-कराल सर्प का दुश्मन था वह मयूर।
वीरो उसी महान अहिंसक को ध्याइए—जिनदेव० ॥१॥
उपसर्ग विष को वीर ने पीयूष था किया।
उस तेज पुंज के चरण में सिर नमाइए—जिनदेव० ॥२॥
जो साम्यवाद मन्त्र अलौकिक सुना गया।
उस विश्व-वन्द्य की जयन्ति अब मनाइए—जिनदेव० ॥३॥
जिनने सुस्याद्वाद का शुद्ध मन्त्र सिखाया।
अब वर्धमान वीर धीर मन में धारिये—जिनदेव० ॥४॥

१५—जय कहो महावीर की ॥

[तर्ज—घर छोड़ कर श्री राम ने उलटा दिया कि यूं]

सब मिल के आज जय कहो श्री वीर प्रभु की,
मस्तक झुका के जय कहो श्री वीर प्रभु की, ॥१॥
विघ्नों का नाश होता है लेने से नाम के,
माला सदा जपते रहो श्री वीर प्रभु की ॥२॥

ज्ञानी बनो दानी बनो बलवान भी बनो,
 अकलंक सम बन जय कहो श्री वीर प्रभु की ॥३॥
होकर स्वतंत्र धर्म की रक्षा सदा करो,
 निर्भय बनो और जय कहो श्री वीर प्रभु की ॥४॥
तुमको भी गर मोक्ष की इच्छा हुई है 'दास'
 उस वाणी पे श्रद्धा करो श्री वीर प्रभु की ॥५॥

१६—नयन सितारा ॥

[तर्ज—छोटे से श्रीराम नाम ने सब जग तारा है]
छोटे से श्रीराम नाम ने सब जग तारा है।
त्रिभुवन स्वामी वीर वही सर्वस्व हमारा है॥ टेर ॥
सुरपति की सारी शंका को, तुमने दूर निवारा है।
 तत्क्षण मेरु हिला कर, अक्षय बल को धारा है ॥१॥
कौशिक चंड डसा जब भगवन्! भव से तारा है।
 तब ही जिनवर वीर बहाई, क्षीर सुधारा है ॥२॥
इक ग्वाले ने बेदर्दी से, प्रभु को मारा है।
 इन्द्र सहायक बन कर आया, पर ललकारा है ॥३॥
चन्दन बाला ने भिक्षा के, हेतु पुकारा है।
 किया उसे कृतकृत्य उसी क्षण, पार उतारा है ॥४॥
भीषण हिंसा रोक अहिंसा, राज्य पसारा है।
 वही वीर प्रभु हृदय हमारा, नयन सितारा है ॥५॥

१७—वीर जिनराज ॥

[तर्ज—मेरा प्यारा भारत देश रहे सदा वसदा]

मेरी आँखों का सितारा, प्यारा वीर जिनराज ।
त्रिशला देवी का दुलारा, महावीर सरताज—टेक॥
छाया हुआ था जग वीच, जब घोर अन्धकार ।
लीना सिद्धारथ घर, कुण्डल पूर अवतार ॥१॥
प्रभु पर उपकारी, तीस वर्ष के भये ।
सभी राज पाट त्याग, प्रभु मुनि हो गये ॥२॥
करी दुस्तर तपस्या, केवल ज्ञान जगिया ।
नीकी वाणी से संसार का, उद्धार कर दिया ॥३॥
सारे देश में दया का डंका, वजवा दिया ।
भूले भटके हुओं को, पंथ दिखला दिया ॥४॥
सबको आत्म कल्याणकारी, ज्ञान सुनाया ।
शिव अजर, अमर, अविनाशी होगए ॥५॥

१८—वीर स्तवन ॥

[तर्ज—रसने! रट लेना, सदा सुखद शुभ नाम]

जय बोलो, जय वोलो, श्रीवीर प्रभु की जय वोलो ।
जब दुनियां मे जुल्म बढ़ा था, हिंसा का यहाँ जोर बढ़ा था
आप लिया अवतार, प्रभु की जल वोलो-जय० ॥१॥
पुण्य उदय भारत का आया, कुण्डलपुर में आनन्द छाया ।
हो रहा जय जयकार, प्रभु की जय वोलो-जय० ॥२॥

राय सिधारथ राज दुलारे, त्रिशला की आंखों के तारे
तीन लोक मनहार, प्रभु की जय बोलो—जय० ॥३॥
भर जोवन में दीक्षा धारी, राज पाट को ठोकर मारी,
करी तपस्या सार, प्रभु की जय बोलो—जय० ॥४॥
तप कर केवल ज्ञान उपाया, जग का सब अंधेर मिटाया
कीना धर्म प्रचार, प्रभु की जय बोलो—जय० ॥५॥
पशु हिंसा को दूर हटाया, सबको शिव मारग दरशाया,
किया जगत उद्धार. प्रभु की जय बोलो—जय० ॥६॥

१९—भज वीर प्रभु ॥

[तर्ज़ उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहां जो सोवत है] ।

उठ भोर भई टुक जाग सही, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ।
अब नींद अविद्या त्याग सही, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥१॥
जग जाग उठा तू सोता है, अनमोल समय ये खोता है ।
तू काहे प्रमादी होता है, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥२॥
ये समय नहीं है सोने का, है वक्त पाप मल धोने का ।
अरु सावधान चित्त होने का, भज वीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥३॥
तू कौन कहां से आया है, अब गमन कहां मन भाया है ।
टुक सोच ये अवसर पाया है, भजवीर प्रभु भज वीर प्रभु ॥४॥
ऐ चेतन, चतुर हिसाब लगा, क्या खाया खरचा लाभ हुआ ।
निज ज्ञान जमा तू सभाल जिया, भजवीर प्रभु भजवीर प्रभु ॥५॥
गति चार चौरासी लाख रुला, ये कठिन कठिन शिवराह मिला ।
अब भूल कुमार्ग विषे मतजा, भजवीर प्रभु भजवीर प्रभु ॥६॥

२०—उपकारी महावीर ॥

[तर्ज़—कैसे फैशन में आशिक हैं जलते हुए]

तूने धर्म का रास्ता बताया प्रभु,
जीव हिंसा को जग से हटाया प्रभु—टेक॥

कोई धनवान था या के मोहताज था,
कोई कंगाल था या के सरताज था।
तूने सबको गले से लगाया प्रभु-तूने० ॥१॥

हर तरफ़ जब मुसीबत के सामान थे,
और बेकस कोई दिनके महमान थे।
तूने विपदा से आकर छुड़ाया प्रभु-तूने० ॥२॥

बेकसों की जो नजरें फलक पर गईं,
दर्दमन्दों ने मिल कर दुआयें जो कीं।
बनके रक्षक तू फिलफौर आया प्रभु-तूने० ॥३॥

पापियों ने था ऊधम मचाया हुआ,
और अज्ञान अन्धेर था छाया हुआ।
ख्वाबे गफ़लत का पर्दा उठाया प्रभु-तूने० ॥४॥

ये रतन देश को मुंह की खानी पड़ी,
हाथ गैरों के पूंजी लुटानी पड़ी।
जबसे उपदेश तेरा भुलाया प्रभु-तूने० ॥५॥

२१—महावीर और पथिक (ड्रामा)

[तर्ज़ मन भंगिया पियो मत भंगिया पियो]

प० मेरे प्यारे जिनन्द २, इस पथ जाओ न ऐ सुखकन्द-मेरे०टेक॥
म० मत रोको मुझे २, इस पथ किंचित भय न मुझे-मत०-टेक॥
प० भगवन् तेरा मृदुल मनोहर, है यह तन अनमोल।
किस विध कष्ट सहेगा भारी, निज मन में तू तोल-मेरे० ॥१॥
म० मृदुल मनोहर तन यह नश्वर, एक दिन होगा नष्ट।
आत्म प्रबल है, निर्भय हूँ मैं, ज़रा न मुझको कष्ट-मत० ॥२॥
प० चंडकोश विषधर से मुझको, तनिक न होगी शूल।
कंटक पथ में बिछे हुए हैं, अरे! अनेकों फूल-मेरे०॥४॥
म० वीर! अनेकों डसे चंडने, है भीषण उत्पात।
मानो जिनवर कहना मेरा, व्यर्थ जायगा गात-मेरे०॥५॥
म० वीरो कष्ट नशाने ही मैं, जाता हूँ इस मार्ग।
क्षीर देहमें चंड तिरेगा, शान्ति जायगी जाग-मत० ॥६॥

२२—चंडकौशिक का उद्धार॥

[तर्ज़ संगदिल गल जायगे मुझको ज़रा रोने तो दो]

मैं नहीं ठहरूंगा हर्गिज मार्ग मेरा छोड़ दो।
बन्धुओ! मेरी तरफ की, व्यर्थ चिन्ता छोड़ दो॥ १॥
स्वप्न में भी भय के मारे, भीत मैं होता नहीं।
मैं तो भय का भी हूँ, भय, हा हू मचाना छोड़दो॥ २॥

मौत मेरे सामने, कर जोड़ थर थर कांपती ।
मैं मदारी मौत का, झूठा डरावा छोड़ दो ॥ ३ ॥
अग्नि जल विष शस्त्र इनका, देह तक सम्बन्ध है ।
आत्मा तो अखंड अविनाशी है आगा छोड़ दो ॥ ४ ॥
हम मुनी हैं स्थूल दुनिया, से निराला मार्ग है ।
मृत्यु में जीवन है लेना, अपनी बाधा छोड़ दो ॥ ५ ॥
जो तुम्हारा सर्प है, हां, मित्र है मेरा वही ।
मित्र के मिलने में देरी यों लगाना छोड़ दो ॥ ६ ॥
विश्व हित के लिये, पागल बना फिरता हूँ मैं ।
देखना होता है क्या, ध्येय से डिगाना छोड़ दो ॥ ७ ॥

२३-महावीर स्तुति

[तर्ज—सखी सावन बहार आई, झुलाए जिसका जो चाहे]

श्री महावीर स्वामी की, सदा जय हो सदा जय हो ।
पवित्र पावन जिनेश्वर की, सदा जय हो सदा जय हो ॥१॥
तुम्हीं हो देव देवन के, तुम्हीं हो पीर पैगम्बर ।
तुम्हीं ब्रह्मा तुम्हीं विष्णु, सदा जय हो सदा जय हो ॥२॥
तुम्हारे ज्ञान की महिमा, जगत में बहुत भारी है ।
लुटाने से बढ़े हर दम, सदा जय हो सदा जय हो ॥३॥
तुम्हारी ध्यान मुद्रा से, अलौकिक शान्ति झरती है ।
सिंह भी गोद में सोते, सदा जय हो सदा जय हो ॥४॥

तुम्हारा नाम लेने से, जागती वीरता भारी।
हराते कर्म लश्कर को, सदा जय हो सदा जय हो ॥५॥
तुम्हारा संघ सदा जय हो, सदा जय हो सदा जय हो।
मुनि दल पूज्य सारे की, सदा जय हो सदा जय हो ॥६॥

२४—प्रार्थना ॥ ✓

[तर्ज़ कनिदर वाला मेरा माँई निभाई जिन लालई यारियाँ]

जीवन सफल बनाना, बनाना प्रभु वीर जिनराजजी-टेक
हृदय मंदिर में घुप है अंधेरा.ज्ञान की ज्योति जगाना २—प्रभु।१।
धधक रहा है द्वेष दावानल, प्रेम पयोधि बहाना २—प्रभु० ।२।
भोग वासना दाह लगी है, अन्तर तपत बुझाना—२ प्रभु० ।३।
अगम भंवर में नैया फंसी है, झट पट पार लगाना—२ प्रभु० ।४।
न्याय मार्ग का पक्ष न छोड़ूं, दुश्मन हो सारा जमाना—२प्रभु०।५।
उत्कट संकट हस हंस झेलूं, अविचल धैर्य बंधाना—२ प्रभु० ।६।
प्राणी मात्र को सुख उपजाऊं, चाहूँ न चित्त दुखाना—२ प्रभु० ।७।
मैं भी तुम सा जिन बन जाऊं, परदा दुई का हटाना—२प्रभु० ।८।
अमर निरंतर आगे बढ़ूं मैं, कर्तव्य वीर बनाना—२ प्रभु० ।९।

२५—नैया पार करो (कवाली) ✓

डूबा मैं जा रहा हूँ, कर पार नैया मेरी-टेक॥
भवसिन्धु है अपारा, जिसका न पार पाया
हैरत में आ रहा हूँ—करो०॥ १ ॥

मद क्रोध लोभ माया, तूफ़ान सिर पे छाया।
चक्कर मैं खा रहा हूँ—कर० ॥ २ ॥
मिथ्यात अंधेर छाया, रास्ता मेरा भुलाया
उलटा मैं जा रहा हूँ—कर० ॥ ३ ॥
परमाद चोर आया, पुरुषार्थ धन चुराया
आलस मैं आ रहा हूँ—कर० ॥ ४ ॥
तारन तरन तू हीं हो, भव दुःख हरन तू हीं हो
निश्चय मैं ला रहा हूँ—कर० ॥ ५ ॥
न्यामत है मझधारा, टुक दीजियो सहारा
मैं सिर झुका रहा हूँ—कर० ॥ ६ ॥

२६—अमर अभिलाषा

[तर्ज़—भगवान भगत के वश में होते आये]

भगवन ! तुम्हारा अब मैं, सच्चा भगत कहाऊ—ध्रुव ॥
क्रोध निकट नहीं आने देऊं, शस्त्र अचूक क्षमा का लेऊं;
दूर ही मार भगाऊं—भ० ॥१॥
सन्त गुणी जन जब मिल जावें, मदमत्सर नहीं मनमें आवें,
सादर शीश झुकाऊ—भ० ॥२॥
सत्य-शंख का नाद बजा के, उथल पुथल की क्रान्ति मचा के
सोता जगत जगाऊ—भ० ॥३॥
न्याय मार्ग से मुख नहीं मोड़ूं, स्वीकृत प्रण की मेंड न छोड़ूं;
कर्तव्य पथ बलिजाऊं—भ० ॥४॥

प्राणी मात्र को अपना भाई, मानूं सबकी चाहूँ भलाई;
सेवा मंत्र बनाऊं—भ० ॥५॥
ऊंच नीच का भेद न मानूं, गुण पूजा का महत्व पिछानूं;
भक्ति न व्योम चढ़ाऊं—भ० ॥६॥
करुणा निधिवर करुणा कीजे, आत्मिक बल कुछ ऐसा दीजे;
अजर अमर हो जाऊं—भ० ॥७॥

२७—मनाओ महावीर

[तर्ज़—भरवाशे मोय नीर]

ओ आनन्द मंगल चावोरे, मनाओ महावीर—॥टेर ॥
प्रभु त्रिशलाजी का जाया, है कंचन वरणी काया ।
जाका दर्शन कर सुख पाओरे, मनाओ महावीर ॥१॥
प्रभु अनन्त ज्ञान गुणधारी, है सूरत मोहनगारी ।
थें दर्शन कर सुख पाओरे, मनाओ महावीर ॥२॥
जाका शिष्य बड़ा है नामी, सदा सेवो गौतम स्वामी ।
जो रिद्ध सिद्ध थें पावारे, मनाओ महावीर ॥३॥
थारा सर्व विघन टल जावे, मन वंछित सुख प्रगटावे ।
फिर आवा गमन मिटाओरे, मनाओ महावीर ॥४॥
प्रभुजी की मीठो वाणी, है अनन्त सुखों की खानी ।
थें धार धार तिर जाओरे, मनाओ महावीर ॥५॥
ये साल गुणयासी भाई, देवास शहर के मांही ।
कहे चोथमल गुण गाओरे, मनाओ महावीर ॥६॥

२८—हृदय सम्राट महावीर

[तर्ज़—मैं वन की चिड़िया, वनके वन-वन डोलूं रे।]

सब आओ हिलमिल, उत्सव आज मनाएंगे।
श्री वीर प्रभु के अनुपम गुणगण गाएंगे॥
श्री धर्म प्राण, जग जनमन भय सब, हारक हृदया धारे।
गुणगण गाएंगे—सब०॥१॥

श्री शुद्ध, बुद्ध पशु पालक, रिपु कर्मपुञ्ज के घालक।
श्री शाश्वत यश द्युति दीप्तिमान, जगती में ज्योति जगाई।
प्रेम बढ़ाएंगे—सब०॥२॥

श्री मिथ्या तिमिर विनाशक, सद्ज्ञानी लोक प्रकाशक।
प्रभु! अवनीतल-जन अन्तस्तल में, धर्म क्रान्ति मचवाई।
बलि बलि जाएंगे—सब०॥३॥

पाखण्ड मोह, मदहारी, जग हिंसा निबिड निवारी।
श्री त्रिशलानन्द हिय में भगवन् अमल कमल सम शोभित।
हर्ष मनाएंगे—सब०॥४॥

२९—क्रान्तिकारी वीर

[तर्ज़—आंखों का था कसूर छुरी दिल पे चल गई]

श्री वीर ने संदेश, अहिंसा सुना दिया।
जग को सुमार्ग आज, अलौकिक दिखा दिया—टेक॥
सर्वस्वतजा वीर ने, संयम ग्रहण किया।
त्यागी ने त्याग पाठ जगत् को सिखा दिया—श्री वीर०॥१॥

बीभत्स ज़ुल्म वीर ने, जग के नशा दिये।
दुनिया को अमर शान्ति, जिनेश्वर दिला गया—श्रीवीर०॥२॥
नवकान्ति हृदय वीर, ने संसार के भरी।
जग में नवीन ज्योति, जिनेश्वर जगा गया ॥श्री वीर०॥३॥
शिवमार्ग की करे कोई, किस तौर साधना।
जिन, अष्ट कर्म काट, अमर पथ चला गया—श्री वीर०॥४॥
जग की वनस्थली को, जिसने हरा किया।
मानस मनुष्य जाति के, पावन वह कर गया—श्री वीर०॥५।

३०—वर्धमान की बंदगी करो।

[तर्ज़—दिलदार कमंदा वालेश]

वर्धमान दी बंदगी कर बंदे, तेरी थोड़ी सी जिन्दगानी है।
क्यों ऐश में गाफ़िल हो रहा है, यह सारी दुनिया फानी है—टेक॥
जब मौत ने सर पर आना है, तुझे खाक के बीच मिलाना है।
धन माल पड़ा रह जाना है, संग चले न कोड़ी कानी है-वर्ध०॥१॥
तेरे जितने यार प्यारे हैं, मतलब के गर्ज़ी सारे हैं।
बिना स्वार्थ होते न्यारे हैं, अंजली में जैसे पानी है ॥वर्ध०॥२॥
तृष्णा ने तुझे भरमाया है, अज्ञान अन्धेरा छाया है।
क्यों विषयो में ललचाया है, सर मौत अचानक आनी है-वर्ध०॥३॥
जब दोज़ख अन्दर जावेगा, वहाँ कष्ट हज़ारों पावेगा।
रो रो कर कूक सुनावेगा, तू करता क्यो मस्तानी है-वर्ध०॥४॥

३१—वीर प्रार्थना

[तर्ज—एक तीर फेंकता जा, तिरछी कमान वाले]

विश्वेश वीर भगवन् !, सुध लीजिये हमारी ।
देवाधिदेव ! रक्षा, अब कीजिये हमारी-टेर॥
परमेश ! वेष तेरा, धारण किया तदपि ये ।
अभिमान को न छोड़ें, देहाभिमान धारा -वि०॥१॥
गृह त्याग के गृह से हा हो रहे हैं स्वामिन् ।
पञ्चों के होय वश में, रचते प्रपंच भारी -वि०॥२॥
परलोक की कथा क्या, इस लोक से न डरते ।
महिमा बढ़ा रहे हैं, कर कूट लेख जारी -वि०॥३॥
माया को त्याग कर भी माया न त्यागते हैं ।
टट्टी की ओट खेलें, आखेट ये शिकारी -वि०॥४॥
खड़गादि शस्त्र सारे, त्यागे तथापि भगवन् !
रखते सदा हृदय में, कापट्य की कटारी -वि०॥५॥
जग जाल छोड़ कर भी, जनजाल में पड़े हैं ।
रचि वाक्य जाल करते, श्रीसघ की खुवारी-वि०॥६॥
परणी हुई प्रिया का, तो प्रेम त्याग दीना ।
फिर भी गले लगाली, हा ! चाहना चमारी-वि०७।
तृष्णा तरङ्गिणी में गोते लगा रहे हैं ।
शिष्यों की लालसा में, नियमावली विसारी-वि०॥८॥
उपदेश अन्य को देने में तो वीरवर हैं ।
गति आपकी न सोचें, हैं नाम के भिखारी-वि० ॥९॥

हैं सूत्र से निराली, समुदाय की रिवाजें ।
मजबूत बांधते हैं, गुर्वामनाय क्यारी–वि० ॥१०॥
मुनि संघ की दशा को, लखशासनेश ! अब तो ।
दो साथ सम्पदा के, सद्बुद्धि श्रेयकारी–वि०॥११॥

सुमन-संचय

जब लग नाता जगत का, तब लग भक्ति न होय,
नाता तोड़ै हरि भजै, भक्त कहावै सोय ।
भक्ति गेंद चौगान की, भावै कोई ले जाय;
कहे कबीर कछु भेद नहि, कहा रङ्क कहा राय ।
लगी लगन छूटै नहीं, जीभ चोंच जरि जाय;
मीठा कहा अंगार में, जाहि चकोर चबाय ।

—भक्त कबीर

❀ सद्गुरु-स्तुति ❀

३२—मार्ग दर्शक गुरु

[राग हमीर]

गुरु बिन कौन बतावे बाट ? बड़ा विकट यमघाट—गुरु ॥१॥
भ्रांति की भयकारी नदियां, बीच में अहंकार की लाट—गुरु० ॥२॥
काम क्रोध दो पर्वत ठाढ़े, लोभ चोर संघाट—गुरु० ॥३॥
मद मत्सर का मेह बरसत, माया पवन वहे डाट—गुरु० ॥४॥
कहत कबीरा सुनो भाई साधु, क्यों तिरना यह घाट—गुरु० ॥५॥

—

३३—सन्तजन [मालिनी]

मधुर मधु-सुधा से, नीम जैसे कटू हैं,
कठिन कुलिश जैसे पुष्प जैसे मृदु हैं।
रजकण सम छोटे, शैल जैसे, बड़े हैं,
चकित जगत है, ये सन्त कैसे बने हैं ॥१॥
प्रिय सुत वनिता का, सर्वथा मोह छोड़ा,
अतुल धन-धरा से भी, स्व सम्बन्ध तोड़ा।
सुध-बुध निज भूले, मत्त से घूमते हैं।
पतित जगत जीवों, को सदा तारते हैं ॥२॥

चतुर कहत कोई, मूढ कोई बताता;
सकल सुखद कोई, व्यर्थ कोई सताता।
समुद युज दृगों से, एकसा देखते हैं,
अहित हित प्रभु से, सन्त ही चाहते हैं ॥३॥
सघन घन घटायें, संकटों की घिरी हैं,
पर, न अचल वाणी सज्जनों की फिरी है।
अभय हृदय आगे मृत्यु भी कांपती है।
हरि-मुख हरिणी सी भीत हो भागती है ॥४॥

३४—सच्चे साधु

[तर्ज़—क़ौम के वास्ते दुःख दर्द उठाया न गया ।]

पाप उपदेश जबां पर, कभी लाते ही नहीं।
धर्म शिक्षा के सिवा, कुछ भी सुनाते ही नहीं ॥१॥
जान लो धर्म उसे, जिसमे दया होती है।
पक्ष करने की कोई, बात सिखाते ही नहीं ॥२॥
देव होते हैं वही, जिनको कभी चाह नहीं।
जगत् की ओर कभी, दिल को लगाते ही नहीं ॥३॥
पास कौड़ी भी नहीं, रखते गुरू वे होते।
अच्छे भोजन पै कभी, दिल को लुभाते ही नहीं ॥४॥
ज्ञान मे ध्यान सदा, जिनका लगा रहता है।
जीव जितने हैं कभी, उनको सताते ही नहीं ॥५॥
बोलते झूंठ नहीं, चाहे कलम सर होवे।
ध्यान चोरी का कभी, दिल मे वे लाते ही नहीं ॥६॥

जानते भगिनी सुता, जगत में नारी जितनी ।
रखते ब्रह्मचर्य सदा, दोष लगाते ही नहीं ॥७॥
देव अरु धर्मगुरु, जान फकीरा ऐसे ।
झूठी बातों पै कभी, कान लगाते ही नहीं ॥८॥

३५—गुरु-महिमा [तर्ज़—पंजाबी]

स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे, स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे ।
उदय हुए हैं बीच दुनियां के, हो गई रोशनी सारे—टेर॥
जो स्वामी तेरे दर आवे; दु'ख दरिद्र सारा जावे ।
बोलन जय जय कारे, स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे ॥१॥
सत्य उपदेश करो तुम स्वामी, पाप निवारक मुक्ति गामी ।
कष्ट मिटादो सारे, स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे ॥२॥
पूनमचन्द्रजी डूंगरसिंहजी, नवीनचन्द्र तीनों रहन सगजी ।
हरदम खिदमतगारे, स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे ॥३॥
महिमा मुझसे करी न जावे, भगत निगाही राम सुनावे ।
सेवक खड़े दुवारे, स्वामी रत्नचन्द्रजी प्यारे ॥४॥
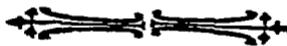
३६—गुरु वन्दन ।

[तर्ज़—महावीर जगस्वामी तुमको लाखो प्रणाम]

गुरु रत्नचन्द्रजी स्वामी, तुमको लाखों प्रणाम—टेर॥
पंच महाव्रत पालनकर्ता, पाप पंक कलिमल-के हर्ता ।
संयम पंथ विहरता, तुमको लाखों प्रणाम ॥१॥

त्याग मूर्ति वैराग्य सुधासर, तेजस्वी तमहारी प्रभाकर।
जैन समाज उजागर, तुमको लाखों प्रणाम ॥२॥
वीर प्रभु के अटल पुजारी, आज्ञासादर सिर पे धारी।
जिनवाणी हृदय उतारी, तुमको लाखों प्रणाम ॥३॥
पाखंड के गढ़ तोड़ गिराये, विजय पटह चहुँ ओर बजाये।
वादीजन थर्राये, तुमको लाखों प्रणाम ॥४॥
छाया था अज्ञान अन्धेरा, बोधि ज्ञान दे किया उजेरा।
हमने सत्पथ हेरा, तुमको लाखों प्रणाम ॥५॥
सदैव हमारे हृदय विहारी, फुलवारी यह खिली तुम्हारी।
महिमा है अति भारी, तुमको लाखों प्रणाम ॥६॥

३७—गुरु वंदना

[तर्ज—श्री वीर प्रभु की जय बोलो]

जिनमत के शृंगार, गुरुवर वंदन हो
भक्त गण के हार, गुरुवर वंदन हो—टेक॥
पंच महाव्रत धारण करके, सारे दोष निवारण करके।
करने जग उपकार, गुरुवर वन्दन हो ॥ १ ॥
दुनियां में अमृत वर्षा कर, जग में प्रेम शान्ति सरसाकर।
बने शांति अवतार, गुरुवर वन्दन हो ॥ २ ॥
धर्मोन्नति का भाव जगा कर, वीर प्रभु का ध्यान लगाकर।
कर दिया सबको निहाल, गुरुवर वंदन हो ॥ ३ ॥

कठिन पार किये पर्वत नाले, पैरों पड़ गये जिनके छाले।
वही खून की धार, गुरुवर वंदन हो॥ ४॥
उन्नति राह हमें वतला दो, प्रेम से रहना हमें सिखादो।
करदो हृदय उद्धार, गुरुवर वंदन हो॥ ५॥
सम्मेलन की धूम मचाई, उन्नति की तस्वीर खिचाई।
कर दिया वेडा पार, गुरुवर वदन हो॥ ६॥
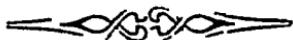
३८—गुरु को हार्दिक धन्यवाद

[तर्ज—कमली वाले ने]

दे धर्म का रत्न निहाल किया, वलिहारी ऐसे गुरुवर की।
कर दिया मुझ को महा सुखी, वलिहारी ऐसे गुरुवर की—टेर॥
जिन वाणी के हुए अनुरागी, तरुण वय में कामिनी त्यागी।
संयम लीनो है वड़ भागी, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ १॥
क्या शिष्य समुदाय तुम्हारी है, जैसे फूलों की डारी है।
वह सब ही आज्ञा कारी है, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ २॥
जब बानी रस बरसाते हैं नर नारी सुन हर्षाते हैं।
अद्भुत उपदेश सुनाते है, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ ३॥
जब दर्श आपके पाता हूं, तब जीवन धन्य मनाता हूँ।
आनन्द मग्न हो जाता हूँ, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ ४॥
भव सागर यह दु:ख पूर्ण भरा, जिस अन्दर मेरा जहाज पड़ा।
कर कृपा उसको पार करो, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ ५॥
अमर रखना यश दुनिया में, जब तक सूरज चन्द्रा जग में।
भगवान से विनती यह मेरी, वलिहारी ऐसे गुरुवर की॥ ६॥

३९—आह्वाहन ॥

[तर्ज़—अब किसी ढंग से मेरी लाज बचाने आओ]

गुरु इस डूबती नैया को तिराने आओ ।
पड़ी मझधार में है पार लगाने आओ-टेक॥
होगया खुश्क चमन, कौम के माली के बगैर ।
आज वो खुश्क चमन, सब्ज बनाने आओ-गुरु०॥१॥
जिस लिये घर को त्यागा था स्वामी तूने ।
आज उस जाति की, पीड़ा को मिटाने आओ-गुरु०॥२॥
आपके गुण की न तारीफ़ कभी हो सकती ।
कर्म बंधन की जंजीरों से छुड़ाने आओ-गुरु०॥३॥

४०—मांग

[तर्ज़—नाम ज़िन्दों में लिखा जायगा मरते मरते]

नाव मझधार पड़ी, पार लगादो गुरुवर ।
शरण मुनिराज तेरी, विघ्न हटा दो गुरुवर॥१॥
नींद अज्ञान में यह, देश पड़ा है सोता ।
ज्ञान के नाद से अब, इसको जगा दो गुरुवर ॥२॥
छोड़ बैठे हैं सभी, धरम करम को अपने ।
पुण्य और पाप का फल, निश्चय करादो गुरुवर ॥३॥
जैन जाति की हुई, आज यह अबतर हालत ।
रस्म बद कौम से अब, दूर हटा दो गुरुवर ॥४॥

हाय पक्षपात से ही, होगई फिरका वंदी ।
प्रेम का प्याला पिला, भेद मिटादो गुरुवर ॥५॥
है पराधीन हुआ, आज यह बुड्ढा भारत ।
देश सेवा का हमें, पाठ सिखादो गुरुवर ॥६॥
दास फैशन के बने, खवर नहीं नेशन की ।
भूले फिरते हैं शिव, राह दिखादो गुरुवर ॥७॥

१-गुरुवर से याचना

[तर्ज़-इरादा छेड़ो न हमतो चले जायेंगे]

जरा भक्तों को पार लगाना गुरु ।
डूवी जाती है नाव वचाना गुरु ॥१॥
मालो दौलत की हमको जरूरत नहीं ।
अपनी भक्ति का अमृत पिलाना गुरु ॥२॥
धन वैभव भी हम हैं नहीं मांगते ।
ज्ञान गंगा में हमको नहलाना गुरु ॥३॥
किसी डिग्री की भी हमको इच्छा नहीं ।
हमें पब्लिक का सेवक वनाना गुरु ॥४॥
किसी से भी न मेरी रहे ईर्षा ।
शान्त रहने का मार्ग वताना गुरु ॥५॥
प्राणी मात्र से मेरी मुहब्बत रहे ।
द्वेष करने से हमको हटाना गुरु ॥६॥
जली भा रही है दुनियां विषय आगमें ।
मुक्ति पाने का मंत्र सिखाना गुरु ॥७॥

४२—हमें यह वर दो।

[तर्ज—अरे नादान मत कर मान, झूठी जिन्दगानी पर।]

श्री रत्नचन्द्र महाराज, हमें यह वर दो, हमे यह वर दो।
कुछ ऐसा अनुपम, ज्ञान हृदय में भर दो—श्री रत्न०॥१॥
मैं प्रेम दृष्टि से देखूं, सब जीवों को, हां सब जीवों को।
वह प्रेम सुधारस मेरे, हृदय में भर दो—श्री रत्न०॥२॥
ये अष्टकर्म महाराज, हमे दुःख देते, हमें दुःख देते।
इनसे बचने का, मन्त्र हमें गुरुवर दो—श्री रत्न०॥३॥
तुम हो मल्लाह गुरु, इस टूटी नैया के, हां इस नैया के।
अब भवसागर से, वेग पार इसे कर दो—श्री रत्न०॥४॥

सुमन-संचय

गुरु गोविन्द दोऊ खडे, काके लागौं पाँय;
बलिहारी गुरु देव की, गोविन्द दियो बताय।
सिंहन के लंहड़े नहीं, हंसन की नहीं पांत;
लालन की नहीं बोरियां, साधु न चलें जमात।
सब बन तो चदन नहीं, सूरा का दल नाहिं;
सब समुद्र मोती नहीं, यों साधू जग मांहि।
गांठी दाम न बांधई, नहि नारी सो नेह;
कह कबीरा ता साध की, हम चरणन की खेह।

—भक्त कबीर

❀ धर्म-महिमा ❀

४३—अमोलक-धर्म ।

[तर्ज—दिखा दे भीख दर्शन की, प्रभु तेरा भिखारी हूँ]

ज्ञान दुर्लभ है दुनिया में, धर्म सब से अमोलक है ।
यही भगवान ने भाख्या, धर्म सब से अमोलक है ॥ १ ॥
रखो तन अपना धन देकर, बचाओ लाज तन दे कर ।
धर्म पर वार दो सबको, धर्म सब से अमोलक है ॥ २ ॥
धर्म के सामने सब हेच है, राज और पाट दुनिया के ।
धर्म ही सार है जग में, धर्म सब से अमोलक है ॥ ३ ॥
धर्म के वास्ते सीता, किया प्रवेश अग्नि में ।
राम तज राज वन पहुँचे, धर्म सब से अमोलक है ॥ ४ ॥
धर्म के वास्ते गर जान-भी जाये तो दे दीजे ।
समझ लीजे यकीं कीजे, धर्म सब से अमोलक है ॥ ५ ॥

४४—धर्म और मनुष्यत्व

[तर्ज—वीर तेरे शिष्यगण की क्या दशा है देखले]

धर्म से बढ़ कर सुखप्रद, वस्तु है कुछ भी नहीं ।
धर्म ही मनुष्यत्व है, इसके विना कुछ भी नहीं ॥१॥
धर्म के आगे जगत की, नेकियाँ सब हेच हैं ।
पाप से बढ़ कर बुराई, विश्व में कुछ भी नहीं ॥२॥

धर्म का सर्वस्व बस, दिलकी सफाई मे ही है।
और सारे ढोंग हैं ये, फायदा कुछ भी नहीं ॥३॥
धर्म के बल से ही संसृति-चक्र सारा चल रहा।
अन्यथा प्रलयान्त होने-मेंकसर कुछ भी नहीं ॥४॥
धर्मधारी के चरण चूमें, सदा सब प्रेम से।
धर्म बिन दो दिन का दीपक, बुझ गया कुछ भी नहीं ॥५॥
धर्म से क्या लाभ है ? मत पूछियेगा तुम कभी।
पालकी ऊपर व नीचे, देख लो कुछ भी नहीं ॥६॥
ढील क्या है धर्म का, संग्रह शुरू कर दीजिये।
यही अमर साथी तुम्हारा, अन्य तो कुछ भी नहीं ॥७॥
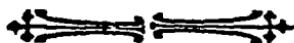
४५—जैन धर्म ॥

[तर्ज—पञ्जाबी जय बोलो रे]

नहीं छडना नहीं छडना श्री जैन धरम परचार भाइयो नहीं०
धर्म अहिंसा है सुखकारा, पशु पक्षीदा पालन हारा।
करे जगत उद्धार, भाईयो नहीं छडना-नहीं० ॥१॥
स्यादवाद है तत्त्व निराला, कर्म फिलासफी इसका आला।
सार सकल संसार, भाइयो नहीं छडना-नहीं० ॥२॥
तिलक सरीखे बता गये हैं, जेकोबी भी जता गये हैं।
महिमा अपरम्पार, भाइयों नहीं छडना-नहीं० ॥३॥
पक्षपात को परे हटाओ, वीर वचन पे श्रद्धा लाओ।
हो भवसागर पार, भाइयो नहीं छडना-नहीं० ॥४॥

सब धर्मों मे सार यही है, आतम का हितकार यही है।
पहुँचावे शिव द्वार, भाइयो नहीं छुटना-नहीं० ॥५॥

४६—जिनमत तजने के बाद ज़माने की हालत

[तर्ज़—कत्ल मत करना मुझे तेगो तबर से देखना]

जब से जिन मत को तजा, हिंसक जमाना हो गया।
सब के दिल से भाव, करुणा का रवाना हो गया—टेक॥

झूठ चोरी औ जिनाकारी, गई हृदय से गुज़र।
पाप करते आप, कलियुग का बहाना हो गया—जब०॥१॥

जीव हिंसा जिसमें है, उसको कलाम, ईश्वर कहें।
हाय भारत आज कल, बिल्कुल दिवाना हो गया—जब०॥२॥

याद रखिये जीव हिंसा से, नहीं होगी निजात।
लाखों को हिंसा से है, नरकों मे जाना हो गया—जब०॥३॥

एक दया से दूसरे भी, आपके हो जायेंगे।
देख लो हिंसा से यह, भारत बिगाना हो गया—जब०॥४॥

भाई से भाई लड़ें, हरगिज़ दया आती नहीं।
फूट का दिल में तुम्हारे, क्यों ठिकाना हो गया ॥जब०॥५॥

न्यामत अब तो दया का, भाव दिल में कीजिए।
हिंसा करते-करते तो, तुमको जमाना हो गया ॥जब०॥६॥

४७—दया धर्म [तर्ज़—गजल]

दयामय धर्म उत्तम है, सभी धर्मों से इस जग में ।
नशाता कर्म बन्धन जो, लगाता मोक्ष के मग मे —टेक॥
जगत मे जीव जितने हैं, सभी के जान है तुम-सी ।
सताओ ना किसी को तुम, लगो परमार्थ के पथ में—दया०॥१॥
हमारे बन्धु हैं सब ही, न कोई द्वेष्य है हमसे ।
करें ना द्वेष हम उनमे, रहें तत्पर सदा इसमें —दया०॥२॥
पिलाओ शत्रुओं को भी, प्रेम पीयूष की धारा ।
यही कर्तव्य है सबका, बताया जैन ग्रन्थों मे —दया०॥३॥
हटाओ स्वार्थ बन्धन को, करो अभिमान का मर्दन ।
लगाओ शक्ति को अपनी, दुःखी जीवों की रक्षा में—दया०॥४॥
रखें विपरीत वृत्ति भी, यदि हमसे कोई ज्ञानी ।
न उनमे द्वेषना धारें, न धारें मित्रता मन में—दया०॥५॥

४८—प्यारी अहिंसा [तर्ज़—गजल]

मचा संग्राम जग में है, अहिंसा और हिंसा का ।
बजेगा जीत का डंका, अहिंसा का, न हिंसा का ॥१॥
हजारों वार हों तो हों, चलेंगे सीना फैलाए ।
उड़ावेंगे जगत भर में विमल झंडा अहिंसा का ॥२॥
डरें क्यों अस्त्र शस्त्रों से, छुवें क्यों अस्त्रशस्त्रों को ।
हमारा राष्ट्र ही जब है, स्वयं-सेवक अहिंसा का ॥३॥

बिना जीते न महारण के, न जीते-जी चलेंगे हम ।
तजेंगे हम न तिल भर भी, कभी रस्ता अहिंसा का ॥४॥
भले पॉलीसियां चल चल, हमें कोई भुलावे दें ।
भुलावे में न आवेंगे, दिखा विक्रम अहिंसा का ॥५॥
न हम नापाक खूनों से, रंगेंगे पाक हाथों को ।
हमारा खून हो तो हो, विजय होगा अहिंसा का ॥६॥
कभी धीरज न त्यागेंगे, जगत् में शान्ति भर देंगे ।
सिखावेंगे सबक सबको, अहिंसा का अहिंसा का ॥७॥
तमन्ना है न दुनिया में, निशां भी हो गुलामी का ।
सभी आजाद हों कौमें, बजे डंका अहिंसा का ॥८॥

——<०✿०>——

४६—दया

[तर्ज—एक दिन अकबर ने भारी क्रोध निज मन में किया]

दर्द गम मख्लूक[1] पर, हमदर्द हो इन्सान तू ।
बेरहम बेतर्स होकर, क्यों फिरे हैवान ज्यूं ॥टेर॥
है अगर तुमको मुहब्बत, ईश से करना कबूल ।
प्यार कर मख्लूक से, मख्लूक का है ईश मूल —दर्द० ॥१॥
खुद बराबर जीव तू, मख्लूक में भी जानना ।
खल्क[2] के जरिये प्रभू को, प्रेम से पहिचानना —दर्द० ॥२॥
खल्क पर हमदर्द होकर, कर परस्तिश[3] ईश की ।
दीन दुखियों में समझ तू, मूरती जगदीश की —दर्द० ॥३॥

१ प्राणी, २ दुनिया, ३ सेवा,

जो रहे हमदर्द दुनिया है, न उनसे ईश दूर।
जो खुदी में मर रहे, उन पर रहे जगदीश क्रूर –दर्द० ॥४॥
है दया का नाम रहमत, ईश को रहमत अजीज[४]।
है नहीं रहमत बराबर, चीज दुनिया में लजीज[५] –दर्द० ॥५॥
गर्चे रहमत बेशकीमत, मोल नहीं देना पड़े।
जिन दिलों मे है दया, मानो वहा हीरे जड़े –दर्द० ॥६॥
जो सदा रहमत दिखावे, दीन पर, शाबास है।
है प्रभु का रूप रहमत, जो सदा अविनाश है –दर्द० ॥७॥
धर्म का है तत्व मुश्किल, चल नहीं सकता क़यास[६]।
आलिमों[७] ने सर झुकाया, थक गये करके तपास –दर्द० ॥८॥
इस लिये है धर्म रहमत, सर्व धर्मों में प्रधान।
है दया नहीं जिन दिलों में, जानना पत्थर समान –दर्द० ॥९॥
है दया सच्ची इबादत,[८] है खरी न्यामत[९] यही।
लोक में 'मालूम' नहीं कब, प्रगट हो रहमत सही –दर्द० ॥१०॥

५०—दया विषे [अष्टपदी लावणी]

दया पालो बुध जन प्राणी, स्वर्ग अपवर्ग सौख्यदानी –टेर॥
दया से दुःख दरिद्र जावे, अचिंती कमला घर आवे।
सुयश कीर्ति दसदिशी छावे, इन्द्र अहमिन्द्र पद पावे॥

४ प्यारी, ५ स्वादिष्ट, ६ कल्पना, ७ विद्वान, ८ इबादत, ९ अच्छी।

दोहा—अष्ट सिद्धि नव निध मिले, बिन उपाय सुख योग ।
टले विघन बिन जतन ही, सफल होय उद्योग ॥
बात यह गुरु मुख से जानी –दया० ॥१॥

दया में धर्म जगत माने, भेद को विरला ही जाने ।
जीव की जाति न पहिचाने, वृथा ही पक्षपात ठाने ॥
दोहा—पंचेन्द्रिय, अरु तीन बल, आयु सांस उसांस ।
इन दस प्राण परातम के, उपजावे नहीं त्रास ॥
दया इसको कहते ज्ञानी–दया० ॥१॥

जीव को जीवत ही प्यारो, न तन से होन चहे न्यारो ।
दुःखी से दुःखी होय भारो, मरण तोहु लागे खारो ॥
दोहा—सुरपति को तो स्वर्ग में, कृमिको बीट मझार ।
जीवन आशा मरण भय, है निश्चय इकसार ॥
दोनों को, ये आगम वाणी ॥ दया० ॥३॥

प्रथम तो प्रिय धन सब ही को, लगे धन से सुत अति नीको ।
पुत्र से वल्लभ तन जानो, अंग से अधिक नयन मानो ॥
दोहा—नयन आदि इंद्रिय से, अधिक पियारो प्राण ।
या कारण कोई मति करो, पर प्राणन की हाण ॥
बुरी जग में बेईमानी–दया० ॥४॥

चहो जो भवदधि से तरना, तो प्रतिदिन दयाधर्म करना ।
यही मुनि माधव की शिक्षा, करो सब जीवन की रक्षा ॥
दोहा—वसु रस निधि शशि साल में, रच्यो छंद सुखकन्द ।
गुजरांवाले नगर के, सुनो भविक जनवृन्द ॥
जैनमत जग में लासानी–दया० ॥५॥

५१.—गौमाता और ज़ालिम [ड्रामा]

गौ—ज़ालिम गौघाती लानत है तेरे ईमान पर,
अभिमान पर—ज़ा० ॥टेक॥

गौ—मैं दूध दही हूँ देती, ज़ा०—चल आगे चल
गौ—मेरे बैल कमावे खेती, ज़ा०—हाँ हाँ बिलकुल
गौ—छुरी चला क्यों बने सितमगर,
इस नन्नी सी जान पर—ज़ा० ॥१॥
ज़ा०—ज़र देकर तुझे मैं लाया, गौ—बे शर्म न बन
ज़ा०—इक पल में समझ चुकाया, गौ—बे रहम न बन
ज़ा०—तुझे मार कर रौनक होवे, मेरी इस दुकान पर—ज़ा० ॥२॥
गौ—मैं देख छुरी गभराई, ज़ा०—बकवास न कर
गौ—अज रो रो क्यों दुहाई, ज़ा०—कुछ आस न कर
गौ—गला फाड़ चिल्लावां तेरे, जू रींगे ना कान पर—ज़ा० ॥३॥
ज़ा०—तुझे आज ही कत्ल करूंगा, गौ—क्या इसमे बने
ज़ा०—बच्चों के पेट भरूंगा, गौ—नहीं धर्म रहे
ज़ा०—धर्मकर्म में क्या लेना है, नजर फक्त गुज़रान पर—ज़ा० ॥४॥
गौ—ऐ जिनवर शरण तुम्हारी, ज़ा०—फरियाद न कर
गौ—ज़ालिम कहे भोकूं कटारी, ज़ा०—प्रलाप न कर
गौ—भूला हुआ है खुदगर्जी में, लानत हिन्दुस्तान पर—ज़ा० ॥५॥
ज़ा०—मैं चरण पड़ूं मा तेरे, गौ—आबाद रहो
ज़ा०—अब रोष नहीं बीच मेरे, गौ-तप शाद रहो
ज़ा—करूं काम जो फिर मैं ऐसा, लानत उस शैतान पर—ज़ा० ॥६॥

५२—क्षमा

[गजल]

क्षमा उत्तम धरम जग में, मुनिजन इसको ध्याते हैं ।
कषाय भाव दु खदाई, ये जीवों को सताते हैं-टेक॥
नहीं है क्रोध सम वैरी जगत में और जीवों का ।
दिपायन से मुनिवर भी,इसके वश होनर्क जातेहैं-क्षमा०॥१॥
विना कुछ दोष के दुर्जन, हैं दु.ख देते मुनिजन को ।
वे समरथ होके सहते हैं, नहीं कुछ क्रोध लाते हैं-क्षमा०॥२॥
वे चिन्तन ऐसा करते हैं, नहीं कुछ दोष है इसका ।
करम जैसे किये पूरव, उन्हीं के फल को पाते हैं-क्षमा०॥३॥
जो नल घाते कोई आकर, विचारे तब श्री मुनिवर ।
न मारे से मरेंगे हम, अमर जो हम कहाते हैं-क्षमा० ॥४॥
क्षमा को धार मिथ्यात्वि, हैं पाते देव पदवी को ।
अगर सम्यक्त्व युत धारे, तो वे शिवपुर को जाते हैं-क्षमा०५॥

५३- क्षमा

[तर्ज-यार खुदगरज जमाना है]

क्षमा रखना मनमें मतिमान
है यह सच्चे वीर जनों का, भूषण एक महान-क्षमा०-टेक॥
जीव मात्र का शत्रु क्रोध है, सद्गुण सभी छिपाता ।
क्रोधी का गुणवृन्द जगत के, काम न कुछ भी आता ॥
न देता है जग उस पर ध्यान। क्षमा रखना मन में मतिमान ॥१॥

जिन में नहीं मानसिक वल है, करते वे ही क्रोध ।
सत्य वीरता और क्रुद्धता, का है पूर्ण विरोध ॥
क्रोध से आता है अज्ञान । क्षमा रखना मन में मतिमान ॥२॥
क्षमा सर्वदा रह सकती है, करती शान्ति प्रसार ।
लाल २ आंखे करने मे. जीवन होता क्षार ॥
स्वर्ग भी उसको नरक समान । क्षमा रखना मन में मतिमान ॥३॥
इतना प्रथम सोच लेना, जब करो जगत पर रोष ।
भरे हुए हैं अपने मे भी, कैसे कैसे दोष ॥
क्षमा का है बस यही निदान । क्षमा रखना मनमें मतिमान ॥४॥
दोषी और पापियों पर है, निष्फल करना क्रोध ।
पाप दोष पर क्रोध करो, या करो क्रोध पर क्रोध ॥
यही हैं सब के शत्रु महान, क्षमा रखना मन में मतिमान ॥५॥
दुर्जन नहीं स्वभाव छोडते, यदि हैं सज्जन आप ।
तो निज सज्जनता न छोड़िये, छोड़े पाप-कलाप ॥
क्रोध पर होओ मत बलिदान, क्षमा रखना मन में मतिमान॥६॥
किन्तु क्षमा की ओट न देना, कायरता को वास ।
सहना पड़े न देश जाति को, अन्यायो का त्रास ॥
ज़रा इस पर भी रखना ध्यान । क्षमा रखना मन में मतिमान॥७॥
अन्यायों के प्रतीकार को, हो जाना, बलिदान ।
करो क्षमा के साथ, वीरता का भी कुछ सम्मान ॥
क्रोध कायरता एक समान । क्षमा रखना मन में मतिमान ॥८॥

५४—सत्य [धर्म वीरो धर्म पर, सानन्द मरना सीखलो]

धर्म वीरो सत्य बोलो, सत्य से कल्याण है।
दूर होते कष्ट सारे, यह सर्वगुण की खाण है—टेक॥
वशीकरण जादू बड़ा, विश्वास का यह स्थान है।
अग्नि-शमन अहि-व्याघ्र-स्थंभन, प्रबल अतिशय वान है॥१॥
आग के बीच बाग हो, दरियाव के बीच थाग हो।
जहर का अमृत बने, मानिन्द गज सम श्वान है॥२॥
अयोध्यापुरी का राज्य फिर, हरिश्चन्द्र को दिया सत्य ने।
सत्यधारी भूप विक्रम, सभी करे परमाण है॥३॥
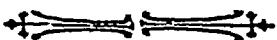
५५—सत्य वचन

[तर्ज—मत भंग पिओ मत भंग पिओ]

मत बोलो बुरा २, झूठ वचन का बोल कड़ा।
सतधर्म बड़ा २, झूठ वचन मत बोल ज़रा—टेक॥
मिथ्यावादी जन का कोई, करत नहीं विश्वास।
कहे बकवादी व्यर्थ प्रलापी, लोग करे उपहास—मत०॥१॥
भूप वसु से झूठ के कारण, पहुँचे नर्क मंझार।
सत्य वचन से नारद को तब, स्वर्ग मिला सुखकार—मत०॥२॥
सत्यव्रती यश कीर्ति पावे, सांचे को नहीं आंच।
झूठी पोल चलेगी कब तक, जैसे हांडी कांच—मत०॥३॥
सत्य बराबर तप नहीं जग में, झूठ बराबर दोष।
कैंची जनेऊ धार गले में, दुःख पाया सत्यघोष—मत०॥४॥

कर्कश कड़वे निन्दाकारक, झूठ वचन मत बोल।
घात करे तलवार से बढ़कर, मत हृदय को छोल-मत०॥५॥
जीभ घिसे नहीं खर्च न होवे, गांठी के कुछ दाम।
फिर भी क्यों नहीं बोलो भाई, मिष्ट वचन शिवराम-मत०॥६॥

५६—शील महिमा

[तर्ज—लाखों पापी तिर गये सत्संग के परताप से]

लाखों प्राणी को तिराया, शील के प्रभाव ने।
पार बेड़े को लगाया, शील के प्रभाव ने॥ १॥
अग्नि में सीता पड़ी थी, हुकम से रघुवीर के।
अग्नि को पानी बनाया, शील के प्रभाव ने॥ २॥
जब सुदर्शन को मिला, शूली हुकम महाराज से।
शूली सिंहासन बनाया, शील के प्रभाव ने॥ ३॥
हथकड़ी बेड़ी पड़ी, जिस वक्त चंदन बाला के।
वीर का दर्शन कराया, शील के प्रभाव ने॥ ४॥
ऐसी सतियों के चरण में, रख फकीरा सीस को।
दूर सब संकट हटाया, शील के प्रभाव ने॥ ५॥

५७—शील धर्म

[तर्ज—पपीहा काहे मचावे शोर]

जगत में शील शिरोमणि सार जगत में—टेर।

शील अनूपम भूषण जग में, धारो सकल नर नार ।
शील रतन की शोभा न्यारी, शील सती शृंगार —जग०॥१॥

शीलवान को सुर नर पूजे, महिमा अपरम्पार ।
नाग बनत है फूल की माला, अग्नि बने जल धार —जग०॥२॥

शूली से सिंहासन कर दे, देव करें जयकार ।
खोले वज्र कपाट छिनक मे, तनक न लागे वार —जग०॥३॥

कच्चे सूत से जल भर लावे, देखो छलनी मंझार ।
दानव देव सभी वश होवे, शील परम हितकार —जग०॥४॥

सोमा, सीता, सेठसुदर्शन, सुदरी सुभद्रा नार ।
शील प्रताप भये जगनामी, पद पाया सुखकार —जग०॥५॥

शील प्रभाव तिरें भवसागर, जस गावे संसार ।
शील महातम कथनी करते, गये वृहस्पति हार —जग० ॥६॥

जो सुख चाहो तो उर लावो, शील सुसज्जित हार ।
शील विहूणे जीवन को, शिवराम सदा धिक्कार —जग०॥७॥

❀ वैराग्य रँग ❀

५८—चेतावनी

[तर्ज—दया धर्म का डंका दुनियां में बजवा दिया त्रिशलानन्दन ने]

जाग मुसाफिर देख जरा,
वो तो कूच की नौबत बाज रही ।
बाज रही सिर गाज रही,
वो तो कूच की नौबत बाज रही —टेक ॥
सोवत सोवत बीत गई,
सब रात तुझे परभात भई ।
सब संग के साथी तो लाद गये,
तेरे नैनन नींद विराज रही —जा० ॥ १ ॥
कोई आज चला कोई काल चला,
कोई चालन काज तैयार खड़ा ।
नहीं कायम कोई मुकाम यहाँ,
चिरकाल मे येही रिवाज रही —जा० ॥ ॥
इस देश में चोर चकोर घने,
निज माल की राख संभाल सदा ।
बहुते हुशियार लुटाय गये,
नहीं कोई की साबत लाज रही —जा० ॥३॥

अब तो तज आलस को मन से,
कर संग समान तैयार सभी।
ब्रह्मानन्द न देर लगाय जरा, बिजली सिर पर गाज रही—जा० ॥४॥

५६—चलने की तैयारी करो

[तर्ज—गजल ताल तीसरी]

क्या सो रहा मुसाफिर बीती है रैन सारी।
अब जाग के चलन की, करले सभी तैयारी—टेक॥
तुझको है दूर जाना, नहीं पास में समाना।
आगे नहीं ठिकाना, होवे बड़ी खुवारी—क्या०॥१॥
पूंजी सभी गुमाई, कुछ ना करी कमाई।
क्या ले वतन में जाई, करजा किया है भारी—क्या०॥२॥
बश में ठगों के आया, दृढ़ जाल में फसाया।
परदेश दिल रमाया, घर की सुधि बिसारी—क्या०॥३॥
उठ चल न देर कीजे, संग में समान लीजे।
ब्रह्मानन्द काल छीजे, मत नींद कर पियारी—क्या०॥४॥

६०—उत्तम शिक्षा [राग होरी काफी]

जिया तोकुं समझ न आई, मूरख तें उमर गुमाई—जिया०—टेक॥
मात पिता सुत कुटुम्ब कबीलो, धन जोबन ठकुराई।
कोई नहीं तेरो तू न किसी को, संग रह्यो ललचाई॥
उमर में तें धूल उड़ाई—जिया०—१॥

राग द्वेष तू किनसे करत है, एक ब्रह्म रह्यो छाई ।
जैसे श्वान रहे काच भवन में, भूक भूक मर जाई ॥
खबर नहीं अपनी पाई—जिया० ॥ २ ॥
लोभ लालच बीच तू लटकत है, भटक रह्यो भरमाई ।
तृषा न जायगी मृग जल पीवत, अपनों भरम गमाई ॥
प्रभु को जान लो भाई—जिया० ॥ ३ ॥
अगम अगोचर अकल अरूपी, घट घट रहत समाई ।
सूर श्याम कहे प्रभु के भजन विन, कबहूँ न रूप दिखाई ॥
जान लो श्याम सदाई—जिया० ॥ ४ ॥

६१—अमूल्य समय [राग मागेदवरी]

अवसर वेर वेर नहीं आवे,
ज्यों जाने त्यों करले भलाई, जनम जनम सुख पावे—अव०॥१॥
तन, धन, जोवन सबही झूठे प्राण पलक में जावे—अव० ॥२॥
तन छूटे धन कौन काम को, काहे को कृपण कहावे—अव० ॥३॥
जिसके दिल में सांच बसत है, ताको झूठ न भावे—अव० ॥४॥
आनन्द घन प्रभु चलत पंथ में,सुमर सुमर गुण गावे—अव०॥५॥

६२—जुल्मी-मन

[तर्ज़—मजा देते हैं क्या यार, तेरे बाल घुंघर वाले]

क्या क्या जुल्म करे मनमीत इस तन मिट्टी पर इतराकर—(ध्रुव)

बैठे सत की खोल दुकान, बोले झूंठ महा तूफान ।
ग्राहक ठग ले झट अनजान,खोटा माल खरा बतलाकर—क्या० ॥१॥
ले कर सोटा पोलेदार, छाती काढ चले बाजार ।
करता बिन कारण तकरार,सौ-सौ झूंठे दोष लगाकर—क्या० ॥२॥
छाया धन यौवन अन्धकार, सूझे कुछ नहीं विचार ।
कूदे भांड सरे दरबार, नाचत वेश्या नित नचवा कर—क्या० ॥३॥
खाता मांस दया संहार, वन में खेले जाय शिकार ।
कर ता भारी अत्याचार,चंचल रसना पर ललचाकर-क्या० ॥४॥
बूढ़ा बैल बना लाचार,फिर भी मरा न काम विकार ।
बांधे मोड़ पड़ो—धिक्कार,चांदी छन-छन-छन बरसाकर—क्या०॥५॥
कर ले परम पिता का जाप,जिस से नष्ट होय भय ताप ।
अच्छी नहीं पाप की छाप,कहता अमर सही समझाकर—क्या०॥६॥

६३-अरे मूढ़ ! गुमान को छोड़

[राग भीमपलास]

गोरे गोरे अंगपे, गुमान छांड बावरे-टेक॥
काया तेरी धुआं जैसी, काल ऊड जायगी ।
जुवानी को मास तेरो, कागवान खायेंगे—गोरे ॥१॥
कहत गुनी तानसेन, सुनिये साहिब अकबर ।
बाँधी मुट्ठी आयो पे, पसार हाथ जायेंगे-गोरे ॥२॥

६४—क्षणभंगुरता

[तर्ज—अगर किस्मत से ऐ जिनवर, तेरा दीदार हो जाता]

मुसाफिर क्यों पड़ा सोता, भरोसा है नहीं पलका ।
दमा दम बज रहा डंका, तमासा है चला चलका ॥१॥
सुबह जो तख्तशाही पर, बडे सज धज के वैठे थे ।
दुपहरे वक्त में उनका, हुआ है वास जंगल का ॥ २ ॥
कहां वो राम और लक्ष्मण, कहां रावण से वलधारी ।
कहां हनुमंतसे योद्धा, पता जिनके न था बलका ॥ ३ ॥
उन्होंको कालने खाया, तुझे भी काल खायेगा ।
सफर सामान करले तू, वनाले बोझको हलका ॥ ४ ॥
जरासी जिन्दगानी पर, न इतना मानकर मूरख ।
ये बीते जिन्दगी पल में, कि जैसे बुलबुला जलका ॥५॥
नसीहत मानले ज्योती, उमरपल २ में कम होती ।
समझकर जाप ईश्वरका, भरोसा कर नहीं पलका ॥६॥

६५—डोली

[तर्ज—वीर भगवन् शीघ्र सुध ले जाइए धर्म उपवन को पुनः विकसाइए]

जब तेरी डोली निकाली जायगी, बिन महुरतदी उठाली जायगी।
उन हकीमोंसे यूं कहदो बोलकर, करते थे दावा किताबें खोलकर ॥
ये दवा हरगिज न खाली जायगी—जब० ॥ १ ॥
ज़र सिकंदरका यहींपर रहगया, मरती दम लुकमान भी यूंकहगया ।
ये घड़ी हरगिज़ न टाली जायगी—जब० ॥ २ ॥

क्यों गुलों पर हो रहा बुलबुल निसार, पीछे है माली खड़ा रह-
खबरदार। मार कर गोली गिराली जायगी—जब० ॥ ३ ॥
होवेगा परलोकमें तेरा हिसाब, जाके मुखतक रोओगे कैसे जनाब।
जब तेरी वो वही निकाली जायगी—जब० ॥ ४ ॥
ऐ मुसाफिर क्यों ? पसरता है यहां, ये किराये पे मिला तुझको-
मकां। कोटडी खाली कराली जायगी—जब० ॥ ५ ॥
चेतकर ऐ भाई तुम प्रभुको भजो, मोहरूपी नींदसे जल्दी जगो।
आतमा परमातमा बन जायगी—जब० ॥ ६ ॥

६६—नश्वर जिन्दगानी [तर्ज रसिया]

भज मन भक्ति युक्त भगवान भरोसा क्या जिंदगानी का।
क्या जिंदगानीका भरोसा क्या जिंदगानी का ॥ टेर ॥
चंचल अमल कमल दल ऊपर ज्यों कण पानी।
जान तरल त्यो तन-क्षण भंगुर, जगमें प्रानी का—भ० ॥ १ ॥
उदय अस्त लों राज हुआ था, पति इन्द्रानी का।
बना तदपि रहा लोभ, तोय हा, कौडी कानी का—भ० ॥२॥
शरद जलद बुद बुद सम जाहिर, जोर जवानी का।
मत कर गर्व गुमान, मान कहना, गुरु ज्ञानी का—भ० ॥ ३ ॥
था जगमें कहा कौन दैत्य, दश मुख की सानी का।
बता पता है कहाँ, इसी, रावण अभिमानी का—भ० ॥४॥
है दुर्गवि दातार प्रेम, दूजी दिल जानी का।
को नहिं पाया क्लेश, प्रेमकर त्रिया बिरानी का—भ० ॥५॥

क्या विश्वास श्वास का पुनि, इस दुनिया फानी का।
लेले संबल संग, नहीं घर आगे नानी का—भ० ॥ ६ ॥
जयपुर का श्रीसंघ रसिक है, श्रीजिनवानी का।
"माधव मुनि" कहे कथन मानमान सुमति स्यानी का—भ० ॥७॥

६७—नश्वर शरीर [तर्ज़—ठेका ताल ३]

काया का पिंजरा डोले रे, इक सास का पंछी बोले—टेक॥
तन नगरी मन है मन्दिर, परमात्मा जिसके अन्दर।
दो नैन हैं पाक समुन्दर, ओ पापी पाप को धोले रे—काया०॥१॥
आने की शहादत जाना, फिर जाने से क्या गभराना।
दुनियां है मुसाफिरखाना, तू जाग जगत में या सोले रे—काया०॥२॥
नित चलते हैं शोक के झल्ले, कुछ सोच विचार तू करले।
दिन रैन तराजू के पल्ले, तू नेकी बदी को तोले रे—काया०॥३॥
माँ बाप पति पतनी का, ये नाता है जीते जी का।
कोई भी नहीं है किसी का, क्या साधिक भेद को खोलेरे—काया०॥४॥
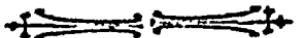
६८—नश्वर संसार [हरिगीति का]

फूल कल उद्यान में फूला फला देखा अहो।
आज "सूरज भान" वह कुमला गया क्यों कर अहो॥
एक सा होता कभी संसार का प्रतिपल नहीं।
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं॥१॥

तीव्र किरणों को बिछाकर विश्व को चमका रहा ।
शाम को वह ढल गया हमको यही सिखला रहा ॥
सोच "सूरजभान" सूरज भी सदा निश्चल नहीं ।
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥२॥
आज तो देखा जिन्हें था, राग रंग उमंग में ।
कल उन्हें हमने निहारा सिर पटकते ढंग में ॥
देख 'सूरजभान' सुख-दुख अनवरत अविचल नहीं ।
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥३॥
मान मत करना कभी अपने विभव धन धाम का ।
याद 'सूरजभान' करना नाम रावण राम का ॥
तीन खण्ड नरेश को मरते समय था जल नहीं ।
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥४॥
मिलगया नर जन्म दुर्लभ, छोड राग द्वेष को ।
वीरवाणी के अनोखे याद कर उपदेश को ॥
कर्म 'सूरजभान' कर, पर हाय तेरे फल नहीं ।
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥५॥

६९—सिकंदर विलाप

[तर्ज—मुस्कराते जाते हैं कुछ. मुंह से फरमाने के बाद]

जर सिकंदर ने जमा कर, कह दिया मैं हूँ खुदा ।
वक्त पडने पर खुदा से, सब लगे होने जुदा — टेक॥
मुल्क यूनान के, हिकमतगारों से यूँ कहा ।
ऐ हकीमों आप बताओ, मौत की कोई दवा—जर०॥१॥

गर सिकंदर का जनाजा, कूचे कूचे में फिरे।
ताकि सबको इल्म हो कि, आखरी का ये मजा—जर०॥२॥
ढेर दौलत के लगा, आँसू बहा कहने लगा।
तू भी मुझको छोड़ती है, खाली हाथों मैं चला—जर०॥३॥
जिसका लख्ते जिगर था, उसका जिगर फटने लगा।
पूछती है हर बशर से, वो सिकन्दर कौन था—जर०॥४॥
तू किसे रोती है बुढ़िया, वो सिकंदर कौन था।
हो चुके ऐसे सिकंदर, सैंकड़ों लाखों दफा—जर०॥५।

७०—चेतन को सत्य सन्देश

[तर्ज—सुन मनुआ मेरा ध्यान लगावो जरा ईश से]

परदेशियां में कौन चलेगा तेरे लार रे—टेक॥
चलेगी मेरी माता, चलेगी मेरी नार।
नहीं नहीं रे चेतन, जावेंगी दर तक लार—पर०॥१॥
चलेगा मेरा भाई, चलेगा मेरा यार।
नहीं नहीं रे चेतन, फूकेंगे अगन मंझार—पर०॥२॥
चलेगी मेरी माता की जाई मेरे लार।
नहीं नहीं रे चेतन झूंठा है सारा व्यौहार—पर०॥३॥
चलेगा मेरा बेटा, पिता परिवार।
नहीं नहीं रे चेतन मतलब का सारा संसार-पर०॥४॥
चलेगी मेरी फौज, चलेगा दरबार।
नहीं नहीं रे चेतन, जीते जीकी है सरकार-पर०॥५॥

चलेगा मेरा माल खज़ाना घरबार ।
नहीं नहीं रे चेतन, पड़ा रहेगा सब वेकार-पर० ॥६॥
चलेगी मेरी काया, चलेगा मान सार ।
नहीं नहीं रे न्यामत , छोड़ेंगे तोहे मझधार-पर० ॥७॥

७१—स्वार्थी संसार [तर्ज़—कर्म विमुख नर डोले]

समझ मन बावरे, सब स्वारथ का संसार—टेक ॥
हरे वृक्ष पर तोता बैठा, करता मौज बहारी ।
सूखा तरवर उड़ गया तोता, छिनमें प्रीत विसारी—समझ० ॥१॥
ताल पाल पर किया बसेरा निर्मल नीर निहारा ।
लखा सरोवर सूखा जब ही, पखी पंख पसारा—समझ० ॥२॥
पिता पुत्र सब लागे प्यारे, जब लों करे कमाई ।
जो नहींद्रव्य कमा कर लावे, दुश्मन देत दिखाई—समझ० ॥३॥
जबलग स्वारथ सधत है जासों, तबलग तासों प्रीत ।
स्वारथ भये कोई बात न बूझे यही जगत की रीत—समझ० ॥४॥
सभी सगे शिवराम गरजके, तुम भी स्वारथ साधो ।
नरतन मित्र मिला है तुमको, आत्म हित आराधो—समझ० ॥५॥

७२—दुनिया की झूंठी प्रीत

[तर्ज़—टुक चेतो जैनी भाई रे तज दो वैर फूट]

मैंने अच्छी तरह से जानी रे, दुनियां की झूठी प्रीत ।
है श्वासा जहां लग आशा रे, दुनिया की झूठी प्रीत— ॥ टेर ॥

ये मात पिता सुत भ्राता, मतलब का सब है नाता ।
बिन मतलब दूरा जाता रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ १ ॥
लाखों का माल कमाया, पापों से घड़ा भराया ।
तूने सुन्दर महल चुनाया रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ २ ॥
उमदा पोषाक सजावे, तू अतर फुलेल लगावे ।
सब तेरा हुकम उठावे रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ३ ॥
कानों में मोटा मोती, तेरी भगमग दीपे ज्योति ।
केई त्रिया मोहित होती रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ४ ॥
फूलों की सेज बिछावे, पदमनी से प्रीत लगावे ।
वा पूरो प्रेम जनावे रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ५ ॥
जो अन्तकाल आ जावे, भूमि पे तुझे सुलावे ।
सब सुन्दर वस्त्र हठावे रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ६ ॥
तू कहता धन घर मेरा, अब हुआ लदाउ डेरा ।
चले पुण्य पाप संग तेरा रे दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ७ ॥
सब छोड़ी काण मुलाजा, मिली मुख२ सब धन खाजा ।
तेरा करके मृत्यु काजारे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ८ ॥
फिर उसी सेज के माहीं, पर पुरुष को लेत बुलाई ।
फिर तुझको दे विसरा इरे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ ९ ॥
नृप परदेशी की प्यारी, थी सुरीकन्ना नारी ।
उन दिया पति को मारी रे, दुनिया की झूठी प्रीत ॥ १० ॥

७३—दुःखमय संसार [तर्ज—समझ मन यावरे]

इस संसार में जी, कोई सुखी नजर नहीं आता —टेर ॥
कोई दुःखी धन विना निर्धनी, दीन वचन हु बोले ।
भ्रमत फिरे परदेशन में नर, धन की चाह टटोले— इस० ॥ १ ॥
दौलत से भंडार भरे हैं, तन में रोग समाया ।
निश दिन कडवी खात दवाई, कह्यो करत नहीं काया- इस०॥२॥
तन निर्मल और धन वहुतेरा, फिर भी सुख को रोता ।
पूजत फिरे कुदेवन को नर, पुत्र कोई नहीं देता— इस० ॥३॥
तन धन निर्मल पुत्र भी पाय के,फिर भी रहा दु खारी ।
पुत्र कपूत आज्ञा नहीं माने, घर में कर्कशा नारी—इस० ॥४॥
तन धन खूब सुलक्षण नारी, पुत्र भी आज्ञा कारी ।
फिर भी दुःखियो रह्यो जगत में, भयो न छत्तर धारी-इस०॥५॥
छत्रपति भये चक्रवर्ती भये, पर नारी पर मोहे ।
आशा तृष्णा घटी न उनकी, वो भी सुख को रोवे—इस०॥६॥
जगनलाल वही है सुखिया, जिसने इच्छा त्यागी ।
राग द्वेष तज सकल परिग्रह, हुए परम वैरागी—इस० ॥७॥
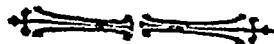
७४—मान निषेध [तर्ज-पैसो प्यारोरे दुनिया ने लागे मोहनगारोरे]

मान मत करज्योरे, श्री वीर प्रभु शास्त्र में वरज्योरे—॥टेर॥
जोबन में रंग रातो मातो, ऊंची रखतो अखियां रे ।
वृद्ध भयो जद परवश पड़ियों, उड़े न मखिया रे-मान०॥१॥

तन को मान घणो मन माहे, नवा नवा नखरा करतो रे।
कालबली ने जोर न चाल्यो, जो घणो अकड़तो रे-मान०॥२॥
जो नर धन को मान कियो, वे धन गमाई ने बैठारे।
आरम्भ कर कर कर्म बांधने, नर्क में पैठारे—मान०॥३॥
विद्या बहुत सीखा मन चाही, बुद्धि विस्तारोरे।
दया धर्म विन सीख्या गयो, यों, ही हार जमारो रे—मान०॥४॥
तीन पांच पद में सुध भूल्यो, सत सगत ने दूरो रे।
मातंग कुल में जन्म लेई, होगयो भंड सूरोरे—मान०॥५॥
मानव भव मुश्किल मे पायो, निर अभिमानी रहजोरे।
कहे मुनिनन्दलाल तणा शिष्य, शिवपुर लीजो रे—मान०॥६॥

७५—कामनिन्दा [तर्ज-पपैया काहे मचावे शोर]

जगत में काम महा दुःख खान-जगत में काम
धन सब खावे अपयश होवे, लागे रोग महान।
कामी जन अपधान करत है, खोवत अपने प्राण-जगत० ॥१॥
यश पर्वत से नीचे पटके, पावे निन्ध स्थान।
गुरुवर को यह लघुतर करदे, यही काम का वाण-जगत० ॥२॥
काम वाण बलवान है ऐसा, सहे न सूर सुजान।
नेम धरम एक छिन में विसारे, नष्ट करै गुण ज्ञान—जगत०॥३॥
राम लखन लख चन्द्रनखा को लगा काम का वाण।
पुत्र मरण का शोक तजा सब, सिर पे चढ़ा शैतान-जगत०॥४॥
काम भाव से रावण नृप का, नष्ट हुआ अभिमान।
सोने का गढ़ लंक लुटा कर; खोई अपनो जान-जगत० ॥५॥

काम के कारण इस दुनिया में, बहुत हुए बदनाम ।
काम बुरा है काम जगत में, काम तजो शिवराम–जगत० ॥६॥

७६—संसार में क्यों आये ?

[तर्ज—कौन कहता है कि मैं तेरे खरीददारों में हूँ]

नाम पैदा ना किया, संसार में आया तो क्या ।
दिल न दिलवर में लगाया, दिल अगर पाया तो क्या ॥१॥

भर लिए धन के खजाने ऐशो अशरत खूब की ।
दीन को यदि दान देते हाथ थर्राया तो क्या॥२॥

दुःख में प्रभु-भक्त होकर, नित्य प्रभुजी को रटा ।
मस्त हो सुख भोग में, प्रभु नाम विसराया तो क्या॥३॥

भीम सा बल में हुआ, लड़ता फिरा हर एक से ।
धर्म रक्षा के समय पग, पीछे सरकाया तो क्या ॥४॥

सत्य का प्रण का धनी, पक्का रहा आराम में ।
कष्ट मे निज लक्ष्य भूला और हिर्राया तो क्या ॥५॥

बैठ खलजन मंडली में, गप्प हांकी खूब ही ।
दो घड़ी सत्संग में गर आते शर्माया तो क्या ॥६॥

वक्त पर इक स्वेद बिन्दु का भी श्रम कुछ ना किया ।
ऐ अमर वे वक्त यदि निज शीश कटवाया तो क्या ॥७॥

७७—फटकार [राग खमाच गत ठुमरी]

कर गुज़रान गरीबी में, मगरूरी किस पर करता है ।
मस्जिदें चढ़ कर मुल्लां पुकारे, यों क्यो साहिब वहिरा है ।
कीड़ी के पाव में नूपुर बाजे, सोही पन साहिब सुनता है—कर०॥१॥
बम्मन होकर पोथी बांचै, खभे खड़िया रखता है ।
औरन का तो ग्रह छुड़ावै, घर का लड़का मरता है—कर०॥२॥
जोगी होकर बसत जङ्गल में, लम्बी माला जपता है ।
कपट कैंची भीतर छुरी, यो क्या साहिब मिलता है—कर०॥३॥
लोह कुटुम्ब में आप विराजे, कोटि यज्ञ क्यों करता है ।
कहत कबीरा सुनो भाई साधु, हम क्यों जम से डरता है—कर०॥४॥

७८—दो दिन की मिजबानी [राग धना श्री]

अब तुम कब सिमरोगे राम—अब०—टेक ॥
गर्भवास में गरज बताई, निकल हुआ बेईमान—अब०॥१॥
बालपनों हंसी खेल गुमायो, तरुन पने में काम—अब०॥२॥
हाथ पांव जब कांपन लागे, निकल गयो अब प्रान—अब०॥३॥
झूठी काया झूठो माया, आख़िर मौत निदान—अब०॥४॥
कहत कबीरा सुनो भाई साधु, दो दिन का मिजबान—अब०॥५॥

७६—बतला दिया कि यूं

[तर्ज—आराम ने घर छोड़ कर बतला दिया कि यूं]

क्यों कर बने परमात्मा बतला दिया कि यूं ।
अरि नाश करके पार्श्व ने बतला दिया कि यूं ॥१॥
दुनिया से कैसे जुल्म हटाए भला कोई ।
महावीर ने घर त्याग के बतला दिया कि यूं ॥२॥
रक्षा धर्म की होती है विपदा मे किस तरह ।
निकलंक ने कुरबान हो बतला दिया कि यूं ॥३॥
दे इम्तिहान शील का किस तौर से कोई ।
सीता ने पड़ के आग मे बतला दिया कि यूं ॥४॥
भाई की मदद भाई किस तौर से करे ।
लक्ष्मण ने शक्ति बाण खा बतला दिया कि यूं ॥६॥
मां बाप के फरमान को किस तौर से करें ।
रघुवीर ने सब राज को ठुकरा दिया कि यूं ॥७॥

८०—अमृत जड़ी [राग—भैरवी, आशावरी, झींझोटी]

हमारे गुरु ने दीनी एक जड़ी ह०—॥टेक॥

कहा कहूँ कछु कहत न आवत, अमृत रस की भरी ।
याको मर्म सन्त जन जानत, लेकर शीश धरी—ह० ॥१॥
मन भुजग अरु पंच नागिनी, सूंघत तुरत मरी ।
डाकिनी एक खात सब जग को, सो भी सूँघत मरी—ह० ॥२॥
निशि, वासर नहीं नाही विसारत, पल छिन आधी घरी ।
सुंदरदास भयो तन निरभीक, सबहीं व्याधि टरी—ह० ॥३॥

८१-आत्मार्थी की भावना [राग—आशावरी वा समाचठुमरी]

अब हम अमर भये न मरेंगे-अब० ॥टेर॥
या कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों कर देह धरेंगे-अब०॥१॥
राग द्वेष जग बन्ध करत है, इनको नाश करेंगे ।
मर्यो अनन्तकाल ते प्रानी, सो हम काल हरेंगे-अब०॥२॥
देह विनाशी मैं अविनाशी, अपनी गति पकरेंगे ।
नाशी जासी अब थिर वासी, चोखे व्है निखरेंगे-अब० ॥३॥
मर्यो अनन्त वार विन समझ्यो, अब सुख दुःख विसरेंगे।
आनन्द घन प्रभु निकट अक्षर दो, नहीं सिमरे सो मरेंगे-अब०॥४॥

८२—आशा में दुःख [तर्ज—राग आशावरी]

आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे आशा-टेक ॥
भटकत द्वार-द्वार लोकन के, कूकर आशाधारी।
आतम अनुभव रस के रसिया, उतरे न कबहु खुमारी—आशा॥१॥
आशा दासी के जे जाये, वे जन जग के दासा।
आशा दासी करे जो नायक, लायक अनुभव प्यासा -आशा॥२॥
मनसा प्याला प्रेम मसाला, ब्रह्म अग्नि परजाली ।
तन भट्ठी अवटाई पिये रस, जागे अनुभव लाली -आशा.॥३॥
आगम पियाला पियो मतवाला, चिनी अध्यातम वासा ।
आनन्द घन चेतन वहीं खेले, देखे लोग तमाशा—आशा.-॥४॥

८३—रहो कर्तव्य पर कायम [गज़ल]

फरज इन्सानियत का है, रहो मशगूल परहित में।
बनो हमदर्द दुनिया के, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ १ ॥
मुसीबत से भरी दुनिया, यथाशक्ति मदद करना।
दया ही धर्म इन्सानी, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ २ ॥
मनुज की देह सर्वोत्तम, भलाई के लिये पाई।
खलाई छोड़ दो भाई, रहो कर्त्तव्य पर कायम ॥ ३ ॥
जगत को फैज पहुँचाओ, जुबाँ से द्रव्य से दिल से।
दया से साफ कर दिल को, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ ४ ॥
दया में तीर्थ जप तप है, दया में राम हरिहर है।
दया है मूल धर्मों का, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ ५ ॥
दया में सिद्धिया सारी, । दया में बरकतें भारी।
दया से कीर्ति नहीं न्यारी, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ ६ ॥
सफर-भव चन्द रोजा है, करो तै नेक वख्ती से।
दया 'मालू'म रख दिल में, रहो कर्तव्य पर कायम ॥ ७ ॥

८४—ऐवंता कुमार का उद्धार ॥

[तर्ज—श्री वर्द्धमान जिनेश्वर, आप विराजो मुक्ति महेल में]

एवंता मुनिवर नाव तिराई वहेता नीर में—टेर ॥
पोलासपुरी नगरी को राजा, विजयसेन भूपाल।
श्री देवी के अंग उपना, ऐवंता कुमारजी—ऐवंता० ॥ १ ॥
बेले २ करें पारणो, गण धर पदवी पाया।
महावीरजी की आज्ञा लेकर, गौतम गौचरी आया जी—ऐवंता० ॥२॥

खेल रहा था खेल कंवरजी, देखा गौतम आता।
घर घर मांहि फिरो ढूंडता, पूछे इसरी वातांजी—ऐवंता० ॥ ३ ॥

असनादिक लेने के काजे, निर्दोषन हम वहरां।
उंगली पकड़ी कुंवर ऐवंता, लायो गौतम लार जी—ऐवंता० ॥४॥

माता देखी कहेपुन्यवंता, भली जहाज घर आणी।
हर्ष भाव घर निज हाथनसे, वहराया अन्न पाणीजी-ऐवंता० ॥५॥

लारे लारे चला कंवरजी, भेट्या मोटा भाग्य।
भगवंतां की वाणी सुणी ने, उपनो मन वैराग्यजी—ऐवंता० ॥६॥

घर आवी मातासु बोले, अनुमत की अरदास।
वात सुनी माता पुत्रकी कांई, मनमें आई हांसजी—ऐवंता० ॥७॥

तू क्या जाने साधुपनेमें, वाल अवस्था थारी।
ऐसा उत्तर दिया कंवरजी, माता कहे वलिहारीजी—ऐवंता० ॥८॥

मोच्छव करीने संयमलीनो, हुआ वाल अणगार।
भगवंतां का चरण भेटीया, धन ज्यारा अवतारजी—ऐवंता० ॥९॥

वरसा काल वरस्यापीछे, मुनिवर ठंडिले जावे।
पालवांध पानीमें पातर, नाव जान तिरावेजी—ऐवता० ॥१०॥

नाव तिरे म्हारी नाव तिरे, यों मुखसे शब्द उचारे।
साधां के मन शंका उपनी, किरिया लागे थारेजी—ऐवंता० ॥ ११ ॥

भगवंत भाखे सर्व साधांने, भक्ति करो सह दिल।
हीला निन्दा मतिकरो कांई, चरम शरीरी जीवजी-ऐवता० ॥१२॥

शासन पति का वचन सुणीने, सबही शीश चढ़ाया ।
ऐवंता की हुंडी सिकरी, आगम माहीं गायाजी-ऐवंता० ॥ १३ ॥

संवत उन्नीसे साल छेयालिस, भिलाडा शेषेकाल ।
रतन चन्द्रजी गुरु प्रसादे, गाई हीरालालजी–ऐवंता० ॥ १४ ॥

सुमन-संचय

ऐसी गत संसार की, ज्यों गाडर की ठाट;
एक पड़ा जेहि गाड़ में, सबै जाँय तेहि वाट ।

स्वारथ के सब ही सगे, बिन स्वारथ कोउ नाहिं;
जैसे पंछी सरसतरु, निरस भये उड़ जाहिं ।

धन अरु गेंद जु खेल को, दोऊ एक सुभाय;
करमें आवत छिनक में, छिन में करते जाय ।

कनक कनकते सौ गुनी, मादकता अधिकाय;
वा खाये बौरात है, या पाये बौराय ।

होत न कारज मो बिना, यह जु कहे सुअयान;
जहां न कुक्कुट शब्द तहं, होत न कहा विहान ।

कबीरा गर्व न कीजिये, अस जोबन की आस,
टेसू फूला दिवस दस, खंखर भया पलास ।

❀ पाखण्ड परिहार ❀

८५—सत्य शोधक का कथन

[तर्ज—इलाजे दर्द दिल तुमसे मसीहा हो नहीं सकता]

जगत सब छान कर देखा, पता सत का नहीं पाया।
निजात होने का जिनमत के, सिवा रास्ता नहो पाया ॥टेक॥
कोई न्हाने में शिव माने, कोई गाने में शिव माने।
कोई हिंसा में शिव माने, अजब है जाल फैलाया-जगत० ॥१॥
कोई मरने में शिव कहता, कोई जरने मे शिव कहता।
दार चढ़ने में शिव कहता, नहीं कुछ भेद है पाया-जगत० ॥२॥
कोई लोभी कोई क्रोधी, किसी के संग में नारी।
जटाधारी लटाधारी, किसी ने कान फड़वाया-जगत० ॥३॥
कोई कहता है मुक्ति से भी, उलटे लौट आते हैं।
अजब है आपकी मुक्ति, मुक्त हो फिर यहीं आया-जगत० ॥४॥
कोई ऐसा मान बैठा है, मुक्ति ईश्वर के कब्जे में।
सिफारिश बिन नहीं मिलती, यही है हमने फरमाया-जगत०॥५॥
कोई कहता है कुछ यारो, कोई कहता है कुछ यारो।
जो सच पूछो हैं दीवाने, असल रास्ता नहीं पाया-जगत० ॥६॥
अगर मुक्ति की ख्वाहिश है, तो जिनमत की शरण लीजे।
पढ़ो तत्त्वार्थ जिन आगम, जिसमें शिवमार्ग बतलाया-जगत०॥७॥
नहीं यहां पै जरुरत है, किसी रिश्वत शिफारिश की।
चला जो जैन शासन पै, उसी ने मोक्ष को पाया—जगत० ॥८॥

करम बन्ध तोड़ के न्यायत, वनो आजाद कर्मों से।
नहीं कोई रोकने वाला, ऋषभ जिन ऐसा फरमाया–जगत०॥९॥

८६—सृष्टिकर्ता ईश्वर नहीं

[तर्ज—हुक्म हमको पिताजी का, वजा लाना ही मुनासिब है]

जगतकर्ता नहीं ईश्वर, अगर होवे तो मैं जानूं।
सरे मुँह भी फरक इसमें, अगर होवे तो मैं मानूं—जगत०॥१॥
जरा इन्साफ करके यार, मेरी बात सुन लीजे।
जो कर्ता का तुम्हें विश्वास, अगर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥२॥
जो ईश्वर सर्व व्यापी है, तो हरकत कर नही सकता।
कभी आकाश मुतहररिक, अगर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥३॥
बिना हरकत किये हर्गिज, नहीं कोई काम हो सकता।
कोई आकर के जतलावे, अगर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥४॥
जगत साकार है, ईश्वर, निराकार आप माने हैं।
कोई निराकार से साकार, अगर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥५॥
वह ईश्वर सच्चिदानन्द है, सदा कल्याणकारी है।
न कर्ता है न हर्ता है, अगर होवे तो मैं जानू—जगत०॥६॥
बिना समझे जगत कर्ता का, लोगों को हो रहा धोका।
न्याय पढ़ देखिये जिनका, न दूर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥७॥
कहे न्यामत न्याय परमाण—से तहकीक कर लीजे।
जगत कर्ता में कोई प्रमाण, अगर होवे तो मैं जानूं—जगत०॥८॥

१ चलना २ चक्कर लगाना,

८७—ईश्वर-स्वरूप

[तर्ज—हुआ सुत राम दशरथ के बहादुर हो तो ऐसा हो]

न रागी हो न द्वेषी हो, सदानन्द वीतरागी हो।
वह सब विषयों का त्यागी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो-टेक॥
न खुद घट घटमें जाता हो, मगर घट घट का ज्ञाता हो।
वह सत उपदेश देता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥१॥

न कर्ता हो न हर्ता हो, नहीं औतार धरता हो।
मारता हो न मरता हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥ २ ॥

ज्ञान के नूरसे पुरनूर,१ हो जिसका नहीं सानी।
सरासर नूर नूरानी,२ जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥ ३ ॥

न क्रोधी हो न कामी हो, न दुश्मन हो न हामी हो।
वह सारे जगका स्वामी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥४॥

वह जाते पाक हो दुनियां के झगड़ों से मुबरा३ हो।
आलिमुल४ गैब होवे, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥ ५ ॥

दयामय हो शान्तरस हो, परम वैराग्य मुद्रा हो।
न जाबिर हो न काहिर हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥६॥

निरंजन निर्विकारी हो, निजानन्द रस विहारी हो।
सदा कल्याणकारी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥७॥
न जग जंजाल रचता हो, करम फलका न दाता हो।
वह सब बातोंका ज्ञाता हो,जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥८॥

---

१ तेज से भरा हुआ, २ आदर्नीयुक्त ३ दूर, ४ सर्वज्ञ।

वह सच्चिदानन्दरूपी हो, ज्ञानमय शिव स्वरूपी हो ।
आप कल्याणरूपी हो, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥९॥
जिस ईश्वर-ध्यान सेती, बने ईश्वर कहे न्यायत ।
वही ईश्वर हमारा है, जो ईश्वर हो तो ऐसा हो ॥ १० ॥

८९—भगवान कहां है !

[तर्ज—मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर करना]

अफसोस है मुझे तुम, यहां वहां तो ढूढते हो ।
मौजूद हूँ जहां मैं, वहा पर न ढूंढते हो ॥ १ ॥
मन्दिर व मसजिदों में, गिरजा घरों के भीतर ।
सोता हूँ आलसी क्या ? वहां जा पुकारते हो ॥ २ ॥
काशी जेरूसलेम में, मक्का में कैद हूँ क्या ?
मिलने मुझे जो वहां, तुम बे सांस दौड़ते हो ॥ ३ ॥
लज्जा से डूबा हूँ क्या ? गगा गोदावरी में ।
बाहर निकालने जो, तुम उनमें कूदते हो ॥ ४ ॥
दीनों व दु:खितों की, सेवा में रहता हूँ मैं ।
हिम्मत हो जिनकी देखो, क्यों ? दूर भागते हो ॥ ५ ॥
मिलना अगर मिलो यहां, सेवाव्रती अमर हो ।
नहि तो यह भक्तपनका, क्यों ? ढोंग बाँधते हो ॥ ६ ॥

९०—भक्तों से परेशान भगवान्

[तर्ज—घटा दे आज की रात और चलें पीर थोड़ी सी]

मनुष्यो क्यों मुझे जबरन, अपन जैसा बनाते हो ।
नमस्ते है तुम्हें तुम तो, मेरी प्रभुता घटाते हो ॥१॥

पिता हूँ विश्व का फिर भी, समझते बाल नन्हा सा ।
लिटा कर पालने में, लोरियां दे दे सुलाते हो ॥२॥
नहीं लगती मुझे सर्दी, नहीं लगती मुझे गर्मी ।
उढ़ाते क्यों दुशाले और, पंखे क्यों डुलाते हो ॥३॥
स्वयं मैं शुद्ध निर्मल हूँ, तथा औरों को करता हूँ ।
समझ का फेर है प्रतिदिन, किसे मलमल न्हलाते हो ॥४॥
भला मुझ निर्विकारी का, विवाह क्या रंग लायेगा ।
बिछा कर पुष्प शय्या, प्रेम से किसको सुलाते हो ॥५॥
नहीं हूँ मैं तुम्हारे मिष्ट, मोहन भोग का भूखा ।
वृथा ही नाम ले मेरा, स्वय मौजें उड़ाते हो ॥६॥
बहाना लेके लीला का, नचाते हो मुझे जहां तहा ।
जख़्म पर है नमक फिर भीख दर दर की मंगाते हो ॥७॥
दया करके मुझे नीचे, गिराना छोड़ दो भक्तो ।
अमर मम तुल्ल बनकर, क्यों न मेरे पास आते हो ॥८॥

६१—व्यर्थ श्राद्ध

[तर्ज़—हा, घटाएं ग़म की छाई आज दिन]

श्राद्ध भी है हिन्द अच्छी बला,
अन्ध श्रद्धा ने किया जग बावला ॥१॥
खा मजे से खीर पुड़ी मुफ्त की,
भर लिया बस पेट नहीं जाता चला ॥२॥
भूमि पर भूदेव स्वर्गों में पितर,
पेट से भोजन किधर वहां को ढला ॥३॥

विप्र भी मुर्दों के वर एजेन्ट हैं,
वे पते ही माल भेजें, क्या कला ॥४॥
साल भर रो-रो के तड़फें भूख से,
एक दिन से क्या गुजारा हो भला ॥५॥
हो गये माता-पिता हैवान गर,
चा हुये भूसा तदा खल में रला ॥६॥
शास्त्र सारे छान कर देखो अमर,
पर न समझे श्राद्ध कर कुछ मामला ॥७॥

६२—स्नान निषेध [तर्ज़ भजन]

ठठरती जावें ठिठरती आवें।
विरथा ही कष्ट उठावें जो कार्तिक न्हावे—टेर॥
परम धरम ये सुनो सहेली, एम कही धर्म बतलावें।
तनु अंगी मिल लघुवय संगी, भोर ही शोर मचावें—ठि० ॥१॥
गोरी भोरी मिल मिल टोली, मुखसे गीत जु गावे।
कामी जन सुन शब्द त्रियन के, उठत ही पाप कमावें—ठि० ॥२॥
अंधकार में कुछ नहीं सूझे, पग पग ठोकर खावें।
मत्त भई नहीं जीव निहालें, तन धन धर्म लुटावें—ठि० ॥३॥
प्रातः काल पानी में पैसे, भैंसा रोल मचावें।
मंडुक मच्छी कछुवादिक बहु, जलचर जीव सतावें—ठि० ॥४॥
जलाश्रयों में सात बोल की, नियमा जिन फरमावें।
दया ंत जो होवे प्राणी, सोही दया पलावें—ठि० ॥५॥

सा माही धर्म जान के, नाहक दुःख उपावें ।
कहा करे बेचारी बाला, कुगुरु मिल बहकावें-ठि० ॥६॥
कार्तिक न्हावें सो सुख पावें, ये उपदेश सुनावें ।
सो दुर्गति दुखदायक कुगुरु, पोल के ढोल घुडावें-ठि० ॥७॥
कोइक कुगुरु स्वमति सेवी, पूजा हित न्हवरावें ।
धर्म काज हिंसा नहीं गणवी, एम कही भरमावें-ठि० ॥८॥
मंद बुद्धिया ते वो सांचा, दुर्लभ बोधी धावें ।
श्री जिन वचन उत्थापक द्वेषी, परभव में पछितावें-ठि० ॥९॥
यों जानी उत्तम भव प्राणी, बिन मतलब नहीं न्हावे ।
आरंभ कारण अनरथ का लखि, जो घटे सो ही घटावें-ठि० ॥१०॥
चरण करण युत सुगुरु मगन मुनि 'माधव' उर में ध्यावे ।
पक्षपात तज बुध जन पेखो, ये उपदेश कहावें-ठि० ॥११॥

६३—पाप में धर्म का ढोंग [तर्ज—भजन]

अघ कर धर्म बतावें, बड़े अचरज की बात ।
अघ कर धर्म बतावें, बडे अनर्थ की बात ॥टेर॥
दया धर्म सब मत में भाख्यो, ठाम ठाम जिन दाख्यो ।
लखो ले आगम हाथ—अघ०॥१॥
भू, जल, जलन, पवन, वनराई, त्रस काया छट्ठी फरमाई ।
तिरण तारण जगतात—अघ०॥२॥

ये षट् काय पुत्र सम जिनके, होय रिपु सम तिनके।
करो मत विरथा घात—अघ०॥३॥

जल में जीव असंख्य वतावें, पूजन में फैलावें।
कलश भर वे वादात—अघ०॥४॥

को शठ अगनी कुंड रचावें, सौरभ द्रव्य जलावें।
कहैं सब अघ जर जात—अघ०॥५॥

भू, नभ गत प्राणी दुःख पावें, धूम जहाँ लों जावें।
होय त्रस तक की घात—अघ०॥६॥

एकादशी आदि तिथि आवें, हरी आप नहीं खावें।
पान फल फूल चढ़ात—अघ०॥७॥

को कहैं धर्म तीर्थ जाने में, गंगा के न्हाने में।
श्राद्ध तर्पण करवात—अघ०॥८॥

भोजन विषय कषाय तजन से, होय विरत शुध मन ते।
शेष लघन कहिलात—अघ०॥९॥

रोजा रूप व्रत कोई करते, दिन भर भूखों मरते।
रात्रि को तिलकुट खात—अघ०॥१०॥

करम बंध किये हिंसा करके, हिंसा ही से निजरके।
मुक्त शठ होना चात—अघ०॥११॥

रुधिर लिप्त तंतू को रुधिर से, धोवे कोई सुचिर से।
श्वेत कहो कैसे थात—अघ०॥१२॥

धर्म काज हिंसा करते हैं, ते दुर्गति परते ।
लखो ज्ञानार्णव भ्रात—अघ०॥१३॥
जो चाहो भव दधि से तरना, तो लो दया का सरना ।
तजो सज्जन पक्षपात—अघ०॥१४॥
सुगुरु मगन मुनिवर सुखदाई, तास चरण सिर नाई ।
मुनी माधव समझात—अघ०॥१५॥

सुमन संचय

न्हाये धोये क्या भया, जो मन मैल न जाय;
मीन सदा जल में रहे, धोये वास न जाय ।
पंडित और मसालची, दोनों सूझे नांहि;
औरन को कर चांदना, आप अंधेरे मांहि ।

भजन पुष्पवाटिका प्रथम भाग

॥ समाप्तम् ॥

भजन पुष्प-वाटिका

दूसरा भाग

वीरगर्जना

वीरपुत्र [गजल]

पुत्र हम वीर के सब हैं, हमारा धर्म न्यारा है ।
अहिंसा शान्ति का पालन, हेतु नित ही हमारा है ॥ १ ॥
हमारा जन्म है जग की, सदा सेवा बजाने को ।
सभी सेवा सुप्रेमी हैं, यही बस धर्म-धारा है ॥ २ ॥
विवेकी और पंडित बन, निरोगी नीतिधारी हों ।
योग्य बनके करें उन्नति, जगत की, यह विचारा है ॥ ३ ॥
सदासर्वज्ञ के सिद्धान्त, फैलावेंगे दुनियां में ।
जिन्हों के ज्ञानने दुख से, प्रणियों को उबारा है ॥ ४ ॥
हमारे अज्ञ भाई हों, उन्हें सत्पथ दिखावेंगे ।
धन्य होंगे, तभी, संसार, भरका, जब सुधारा है ॥ ५ ॥
धर्म क्या है सुनावेंगे, ज्ञान यह भव्य जीवों को ।
न दुःखों की करें चिन्ता, हमें कर्त्तव्य प्यारा है ॥ ६ ॥

२—वीर वांछा

[तर्ज़—सीया राम अयोध्या बुलालो मुझे]

सबको वीर सन्देश सुनायेंगे हम ।
करना भक्ति उसी की सिखायेंगे हम—टेर॥

हो गया आनन्दकारी अब सुबह् जग जाइये ।
छोड़ कर आलस्य को बस जैनियों उठ जाइये ॥
सारी दुनियां को जैनी बनायेंगे हम—स० ॥१॥
मत पड़ो गफलत में अब तो होश में आ जाइये ।
कार्य के मैदान मे कुछ करके झट दिखलाइये ॥
तुमको उन्नति मार्ग बतायेंगे हम—स० ॥२॥
हो रहे हमले धरम पर ध्यान जल्दी लाइये ।
अपनी हालत देख कर कुछ तो जरा शरमाइये ॥
सारे जैनों की हिम्मत दिलायेंगे हम—स० ॥३॥
वीरता रखिये सदा नहिं खौफ दिल में लाइये ।
होके सन्मुख फिर न पीछे को क़दम ले जाइये ॥
तुमको कर्तव्य वीर बनायेंगे हम—स० ॥४॥
गर्जना कर केशरी सम, सबको धर्म सुनाइये ।
काट छूवा-छूत की जड़, दिल से दूर भगाइये ॥
सब के सीने से सीने मिलायेंगे हम—सा० ॥५॥
ज्ञान की ले शक्ति पूरी हर जगह् फिर जाइये ।
दे सदा उपदेश हरसू, जैन की फैलाइये ॥
तब ही दुनिया मे जैनी कहायेंगे हम—स० ॥६॥

वीर स्वामी के सदा प्रात: सहर्ष गुण गाइये।
वीर के जय-घोष से प्रतिदिन गगन गुंजाइये॥
जैनी झंडा जहां में लहरायेंगे हम-स० ॥७॥

अहिंसक नाद [गज़ल]

अहिंसा ही दिलाएगी, हमें स्वाधीनता प्यारी।
सुखी हमको बनाएगी, मिटा परतंत्रता सारी ॥ १ ॥
अहिंसा में वह ताक़त है कि, कुल ब्रह्मांड हिल जाए।
अहिंसा भक्त को निर्बल समझना, भूल है भारी ॥ २ ॥
चाहे कितना कोई हमको, सताये खूब जी भरकर।
नहीं उफ़ तक करेंगे हम, दिखाएगे न लाचारी ॥ ३ ॥
नहीं हथियारों की लेंगे, शरण हम भूल करके भी।
खुले सीने निहत्थे ही, रहेंगे वीर हुङ्कारी ॥ ४ ॥
नहीं मरने से हम डरते, न मरना चीज है कुछ भी।
अमर हम हैं हमारा क्या, करेगी मौत बेचारी ॥ ५ ॥

४—प्रतिज्ञा

[तर्ज़—बिगड़ी हुई तकदीर बनाई नहीं जाती]

सारे जहां को देखना जैनी बनायेंगे।
श्री वीर का सन्देश हम सबको सुनायेंगे ॥ १ ॥
हा फूट से बरबाद हुई क़ौम हमारी।
कर संगठन अब फूट की हस्ती मिटायेंगे ॥ २ ॥

गल्ती हमारी से जो भाई फट गये हम से ।
सानंद फिर अपने में अब, उनको मिलायेंगे ॥३॥
हा ! आगे बढ़ने से हमें, जो रोकती रूढ़ी ।
जड़ से इन्हें अब काट हम, सत्पथ दिखायेंगे ॥ ४ ॥
यह द्वेषता जो बढ रही, है देश में हरसू ।
सारे जहां में प्रेम की गंगा वहायेंगे ॥ ५ ॥
करते हैं काँट-छाँट-मुखालिफ़ जो हमारी ।
शास्त्रार्थ में अब हम उन्हे नीचा दिखायेंगे ॥६॥
ये जो हमारे वीर आलस नींद में सोते ।
कर्तव्य की भेरी वजा सबको जगायेंगे ॥ ७ ॥
जो चाहे कहे कोई सुनेंगे न किसी की ।
जग में अमर जैनत्व का डंका बजायेंगे ॥ ८ ॥

५—रामचन्द्रजी का वन को प्रस्थान

(तर्ज़—लगी जो जान जाना से तो जाना ही मुनासिब है)

हुकुम हमको पिता का अब, बजाना ही मुनासिब है ।
अवध को छोड़, जंगल में—हमें जाना मुनासिब है ॥ टेक ॥
नहीं है रोष का मौका, सुनो लक्ष्मण मेरे भाई ।
माता केकई के आगे, सर झुकाना ही मुनासिब है—हुकम०॥ १ ॥
अवध के तख़्त पर अब तो, नहीं बैठूंगा मैं हरगिज़ ।
ताज मेरा भरत के सर, सजाना ही मुनासिब है—हुकुम०॥ २ ॥

धनुष तुमने जो चिल्ले थे, चढ़ाया है बिना समझे ।
धनुष को बाप ने उलटा, हटाना ही मुनासिब है-हुकुम० ॥ ३ ॥
राज के वास्ते भाई, न भाई से लड़ेंगे हम ।
वचन राजा का अब हमको, निभाना ही मुनासिब है-हुकुम०॥४ ॥
हुआ भारत सभी गारत, पड़ी जो फूट आपस में ।
कहे न्यामत फूट को अब, मिटाना ही मुनासिब है-हुकुम०॥५ ॥

६—सती सीता का रावण को जवाब

[तर्ज़—कोई ऐसो सखी चातुर न मिली, मोहे पी के द्वारे पहुँचा देती]

अरे रावण तू धमकी दिखाता किसे,
मुझे मरने का खौफ खतर ही नहीं ।
मुझे मारेगा क्या अपनी खैर मना,
तुझे होने की अपनी खबर ही नहीं-अरे०॥ १॥
क्या तू सोने की लंका का मान करे,
मेरे आगे वो मिट्टी का घर ही नहीं।
मेरे मन का सुमेरु हिलेगा नहीं,
मेरे मन में किसी का डर ही नहीं-अरे० ॥२॥
तूने सहम उठाया जो गर्भा यहाँ,
हाय इन पर भी तुझको सबर ही नहीं ।
परतिरिया में तूने जो ध्यान किया,
क्या निगोदो नरक का खतर ही नहीं-अरे० ॥३॥
आयें इन्द्र नरेन्द्र जो मिल के सभी,

क्या मजाल जो शील को मेरे छूने ।
तेरी हस्ती है क्या सिवा राम पिया,
मेरी नजरों में कोई बशर ही नहीं-अरे० ॥४॥
क्यों न जीत-स्वयंवर तू लाया मुझे,
मेरी चाह थी मन में जो तेरे बसी ।
था तू कौन शहर मुझे देवो बता,
जहां स्वयंवर की पहुँची खबर ही नहीं-अरे०॥५॥
हुआ सो तो हुआ अब मान कहा,
मुझे राम पै जलदी से दे तू पठा ।
कहे न्यामत वगरने तू देखेगा यह,
तेरे सरकी कसम तेरा सर ही नहीं-अरे०॥६॥

७—निर्भीक

[तर्ज़—मरना है इक रोज क्यों ना मरें वतन की शान पर]

मरना है इक रोज क्यों ना मरें धर्म के नाम पर ।
हां मरें धर्म के नाम पर, मेरे जैन धर्म के नाम पर—टेर ॥
महावीर प्रभु का गुण गावें, कुत्सित देवों को न मनावें ।
वारें तन धन प्राण जिनेश्वर, देव गुणों की खान पर ॥ १ ॥
सत्यवृत्ति को कभी न छोड़ें, दया धर्म से मुख ना मोड़ें ।
फिर इक दिन फहराय वीर का, झंडा जगत महान पर ॥ २ ॥
पंच परमेष्ठी मन्त्र हमारा, यही जान से हमको प्यारा ।
होंगे सफलीभूत भरोसा रखते हैं भगवान पर ॥ ३ ॥

सुख दुख में ना धर्म को भूलें, सभी विघ्न बाधाएँ सह लें ।
श्रावक श्ररणक जैसे अब फिर, जन्में हिन्दोस्तान पर ॥ ४ ॥
सादा सीधा जन्म बितावें, सद्गुरु देव धर्म को ध्यावें ।
रहलें सूरजभान, सदा हम, महावीर के नाम पर ॥ ५ ॥

८—धर्मवीर का डंका

[तर्ज—महावीर के हम सिपाही बनेंगे]

जो है फर्ज अपना निभाके रहेंगे ।
जमाने को जौहर दिखाके रहेंगे ॥ १ ॥
यह उजड़ा हुआ है प्यारा वतन जो ।
उसे स्वर्ग जैसा बनाके रहेंगे ॥ २ ॥
निगाहों मे नफरत की जो देखते हैं ।
हम आंखों में उनकी समा के रहेंगे ॥ ३ ॥
नहीं खुलती दम भर को भी आंख जिनकी ।
हम उन भाइयों को जगा के रहेंगे ॥ ४ ॥
प्रेम और दया धर्म है सब से बढ़ कर ।
हरएक को सबक यह पढ़ा के रहेंगे ॥ ५ ॥
सुनो दोस्तो सारी दुनियों में अब हम ।
मुहब्बत की बंशी बजा के रहेंगे ॥ ६ ॥
न होगी जुबां बन्द ए दास अपनी ।
'श्री वन्दे वीरम,' सुना के रहेंगे ॥ ७ ॥

९—सैनिक बनेंगे

[तर्ज—विपत में सनम ने सँभाली कमलिया]

महावीर स्वामी के सैनिक बनेंगे ।
इसी के बताये सुपथ पर चलेंगे ॥ १ ॥
विपत्ति सहेंगे, जो आएँगी ऊपर ।
न तिल मात्र भी निज प्रण मे डिगेंगे ॥ २ ॥
उठाये अहिंसा का झण्डा फिरेंगे ।
अहिंसा को संसार-व्यापी करेंगे ॥ ३ ॥
जियेंगे तो धर्म की रक्षा की खातिर ।
इसी धर्म रक्षा की खातिर मरेंगे ॥ ४ ॥
मिटा ऊँच नीचे के भेद भयकर ।
अटल साम्य सूचक-नया युग रचेंगे ॥ ५ ॥
'लखो शक्ति अपनी बनो पूर्ण ईश्वर ।'
सदेशा प्रभू का यह सबसे कहेंगे ॥ ६ ॥
अनेकान्त नद में मिला मत नदियां ।
मत-द्वेष जग से मिटा के हटेंगे ॥ ७ ॥
नहाके त्रिरत्न त्रिवेणी के हृद मे ।
त्वरित मुक्ति मन्दिर मे जाके रमेंगे ॥ ८ ॥

१०—वीर सुदर्शन का राणी को उत्तर

[तर्ज—बढादे भाजजी पाव और चर्खें पोर थोडी सी]

सुदर्शन ऐसी बातो में, कभी हर्गिज़ न आएगा ।
ख़ुशी से अपना यह सर, सत्य के पथ पर कटायेगा—सुद० ॥ १ ॥

गृहांगण में अमित लक्ष्मी, सदा अठखेलियां करतीं ।
तुम्हारे तुच्छ वैभव पर, भला क्योंकर लुभाएगा—सुद०॥ २ ॥
जहे इस राज्य की गूँगी. प्रजा के खून से तर है ।
घृणा है, स्वप्न तक में ध्यान लेने का न लाएगा—सुद० ॥ ३ ॥
मिले यदि इन्द्र का आसन, पतन्युत धर्म से होकर ।
न लेगा, ठीकरा ले भीख दर दर मांग खाएगा—सुद० ॥ ४ ॥
डराती क्या है पगली ? मौत का यह डर दिखा करके ।
उछल कर पेरे खंजर शीश झट अपना झुकायेगा—सुद०॥ ५ ॥
न कुछ जीवन की परवाह है, न कुछ मरने का डर दिल में ।
मुसीबत लाख झेलेगा, मगर निज प्रण निभायेगा—सुद० ॥ ६ ॥
तुझे करना हो सो करले, खुशी है छूट तेरे को ।
अटल निज सत्य की महिमा, सुदर्शन भी दिखाएगा—सुद० ॥७॥

११—जैन माता का आशासाह को आदेश

[तर्ज—सभी सावन बहार आई, झुलाए जिसका जी चाहे]

अरे आशा ! तुमे आशा, बंधाना ही मुनासिब है ।
शरन में आये को प्रब तो, बचाना ही मुनासिब है ॥१॥
पड़ा किस सोच में बैठा, नहीं है सोच का मौका ।
समझले अब तो जैनीपद, निभाना ही मुनासिब है ॥२॥
लगा तू देख तो हिम्मत, भला इस धाय पन्ना की ।
तुझे भी इसकी हिम्मत, अब बढ़ाना ही मुनासिब है ॥३॥
तेरे पर आयेंगे संकट, बड़े भारी मैं मानूं हूँ ।
धरम के वासते संकट, उठाना ही मुनासिब है ॥४॥

वने सव भीरु महाराजा, किसीने भी नहीं रक्खा।
सवक़ उनको दिलेरी का, सिखाना ही मुनासिब है ॥५॥
पढ़ी है तूने श्रद्धा से, जो वाणी वीर स्वामी की।
अरे उन पर अमल करके, दिखाना ही मुनासिव है ॥६॥
अमर रखले उदयसिंह को, तू अपने पास वेखटके।
हुकम मेरा तुझे अव यह, वजाना ही मुनासिव है ॥७॥

१२—जैन सम्राट् चन्द्रगुप्त का सिकंदर को जवाब

[तर्ज़—तौहीदका डंका आलम में वजवा दिया कमली वाले ने]

मारत में डंका गैरों का, अव मैं न कभी वजने दूंगा।
भारत में भारत शत्रु को, अव मैं न कभी टिकने दूंगा ॥१॥
तुम कुल भारत के दुश्मन हो, फिर नंद पे कैसे ले जावूं।
एक ईंट की खातिर मन्दिर को, मैं नष्ट नहीं करने दूंगा ॥२॥
मैं खुद ही नंद से लड़कर के, अपना पद वापिस ले लूंगा।
लेकिन गैरों के हाथों से, भाई को नहीं मरने दूंगा ॥३॥
मैं मौर्यवशी क्षत्री हूँ, सव चालें तुम्हारी समझूं हूँ।
इमदाद तुम्हारी लेके, तुम्हारा काम नहीं वनने दूंगा ॥४॥
तुम योद्धा नहीं लुटेरे हो, भारत को लूटन आये हो।
पर याद रखो मैं जीते जी, भारत को नहीं लुटने दूंगा ॥५॥
तुम मातृभूमि हमारी की, सव इज्जत खोना चाहते हो।
लेकिन यह भुजा-वल जव तक है, इज्जत को नहीं घटने दूंगा ॥६॥
मैं जयन शील हूँ जैनी हूँ, नहीं जग में किसी से डरता हूँ।
चाहे कुछ हो अमर पर भारत का, सर मैं कभी न झुकने दूंगा ॥७॥

१३—गुरु गोविन्दसिंह के नौनिहालों की शहादत

[तर्ज—हैं प्रभो नाम तेरा, लागता है प्यारा हमको]

जिक्र इसलाम का, इस वक्त न हमसे कर तू।
जिस्म तो दब ही चुका, अब सीस पे पत्थर धर तू ॥१॥
नुत्फे[1] गोविंद के हैं, जिनसे दहलती शाही।
सिंह पुत्रों को न गीदड़ के बराबर कर तू ॥२॥
जिस्म खाकी को मिला, खाक में मिलना है जरूर।
रूह[2] को मारके दिखला दे, तो जानूं नर तू ॥३॥
हुकम ईश्वर का यूं ही, इसमें उज्र ही क्या है।
तमा क्या देता है ले जायगा हमराह[3] जर तू ॥४॥
सर को दे तेग बहादुर ने, ली थी सरदारी।
हमको भी आज उसी, जैल में जालिम धर तू ॥५॥
शुक्र सद शुक्र हुए, धर्म के बदले कुर्बान।
गौर से देख हकीकत, की हकीकत पर तू ॥६॥
धर्म से प्रेम करें, जिस्म से उल्फत[4] तोड़ें।
वस्ल[5] आसान नहीं मरने से पहले मर तू ॥७॥
हाथ तो दब चुके अब, आंखें उठा कर यह दास।
अर्ज ईश्वर से यही, भक्तों से भारत भर तू ॥८॥
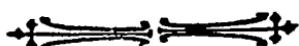
१ सन्तान, २ आत्मा, ३ साथ, ४ मोहब्बत, ५ प्रेम।

१४—राणा प्रताप का अकबर को जवाब

[तर्ज—शोर है हरसू कि हिन्दुस्तान वाले मिट गये]

यूँ जवाब दिया अकबर को राणा ने पैगाम का।
सिर झुकाऊँ किस तरह, फरजन्द[1] हूँ मैं राम का ॥१॥
पृथ्वी है मेरा तखत, और फ़लक[2] है अपना कफन।
कौम का ग़म खाता हूँ, भूखा नहीं ईमान का ॥२॥
क्षत्रियों के वासते कब ऐशो अशरत है रवा[3]।
दर्देमिल्लत[4] का हूँ आदी[5], ग़म नहीं आराम का ॥३॥
हूँ सरापा मैं फ़ना, हुब्बे[6] वतन में ऐ मुगल।
मुझको गर्दिश में मजा, मिलता है दौरे जाम का ॥४॥
मुझको है हरदम यह गम, आजाद ये मुल्क वतन।
है मुझे दरपेश किस्सा, हिन्द की अकवाम[7] का ॥५॥
इज्जते आवा[8] का मैंने, रक्खा है सगे बिना।
खास मतलब है मेरे, आग़ाज[9] का अंजाम[10] का ॥६॥
जिन्दगी बाकी अगर, मेरी है तो चित्तोड़ में।
एक दिन जारी करूंगा, सिक्का अपने नाम का ॥७॥
लो श्री प्रताप ने जो, कुछ कहा पूरा किया।
बेगुमां[11] वह मर्द था, और आदमी था काम का ॥८॥

---
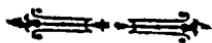
१ सन्तान, २ आकाश ३ जारी, ४ दुःख, ५ अभ्यासी, ६ प्रेम, ७ कार्यों, ८ वमन, ९ शुरूआत, १० फल, ११ निरभिमानी।

१५—धारणी देवी की मेघ कुमारा को शिक्षा

[तर्ज—मारा गुरुजी गुणवंत, आछो ज्ञान सिखायो]

सुनो लाल संयम पाल, वेगा मोक्ष में जाजो—टेक ॥

विनय करी खूब, गुरुदेव रिझाजो ।
होय जो अपराध वारंवार खमाजो-सुनो०॥१॥

शीखजो बहुज्ञान, थें परमाद घटाजो ।
मेघ की झड़ी ज्यूँ तपस्या खूब लगाजो-सुनो०॥२॥

आज ज्यूँ दिन रात थें वैराग्य वधाजो ।
सार दया धर्म तामें, चित्त रमाजो-सुनो०॥३॥

फेर दूजी मातनी, मत कूख में आजो ।
जन्म जरा मरण का, सब दुःख मिटाजो-सुनो०॥४॥
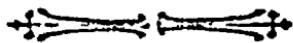
सुमन संचय

माय रहौ वा नार रहौ, तजै न सत्य अकाल;
कहत कहत ही चुनि गये, धनि गुरु गोविन्दलाल ।
हां वह है आजाद, जो कादिर दिल पर जिस्म पर;
जिसका मन काबू में है, कुदरत है शकलो इस्म पर ।
करे न कबहूँ साहसी, दीन हीन सा काज;
भूख सहै पर घास को नहिं खावै मृगराज ।

❀ जैन समाज के प्रति ❀

१६—पुकार

[तर्ज़—ठिकाना पूछते हो क्या, हमारा क्या ठिकाना है]

उठो अब नींद को त्यागो, हुआ बिलकुल सवेरा है।
हवा बदली जमाने की, तुम्हे आलस्य ने घेरा है ॥१॥
बड़े बढ़ने लगे तुमसे, जो छोटे थे कई दरजे।
तुम्हारी अक्ल पर कीना, जहालत ने बसेरा है ॥२॥
पड़े तुम बेखबर सोते, नहीं जगते जगाने से।
तुम्हारे घर मे घुस बैठा, अविद्या का लुटेरा है ॥३॥
बुजुर्गों की थी क्या इज्जत, तुम्हारा हाल अब क्या है।
जरा तो गौर कर सोचो, हुआ यह क्या अन्धेरा है ॥४॥
करो अब देश की चिंता, यह गफलत नींद को त्यागो।
नहीं, अब डूबता कुछ दिन में यह भारत का बेड़ा है ॥५॥
चली जब जायगी सारी, तुम्हारी शान और शौकत।
तो फिर अफ़सोस खाओगे, पड़े जब दुःख घनेरा है ॥६॥
जगाओ ऐ प्रभु अब तो, हमारे देशी भाइयों को।
यही बलदेव की अरजी, भरोसा नाथ तेरा है ॥७॥

१७—वीरों को सन्देश

[तर्ज—हुक्म हमको पिता जी का,वजा लाना मुनासिब है]

उठो वीरो हुआ तड़का, जिनेश्वर नाम ले ले कर ।
फहरा दो कौम का झण्डा,जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥१॥
करो प्रचार मज्हब का, बढ़ाओ अजमतो[1] शौकत ।
बजाओ धर्म का डंका, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥२॥
ना झिझको जाति पांति से, न भागो गैर जाति से ।
बनाओ सब को तुम अपना, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥३॥
खुलाओ जाबजा[2] स्कूल, गुरुकुल पाठशालायें ।
दिलाओ प्रेम की शिक्षा, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥४॥
हटाओ बालपन शादी, मिटाओ क़ौम-बरबादी ।
सुनो कहना न अहों का, जिनेश्वर नाम ले ले ले कर ॥५॥
न रक्खो धर्म के झगड़े, सुना कर प्रेम की नज्म[3] ।
सिखाओ उन्नती करना, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥६॥
बनादो उनके दिल निर्भय, जो हैं आधीन गैरों के ।
सिखादो अपने बल उठना, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥७॥
हटाओ नाच और मुजरे, जो लूटे क़ौम का पैसा ।
करो अब ज्ञान का जलसा, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥८॥
कहे "नौबत" सुनो वीरो, जमाना बढ गया आगे ।
पहन लो अब नया जामा, जिनेश्वर नाम ले ले कर ॥९॥

---

१ बड़ी शान, २ जगह जगह, ३ कविताएं
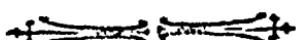
१८—सभा सम्बोधन

[तर्ज़—क्या सो रहा मुसाफिर, बीती है रेन सारी]

सारी सभा के सज्जन सुनिये जरा हमारी।
लेकर के काच देखो, कैसी दशा तुम्हारी ॥१॥
जो नाम था तुम्हारा, पहले वह अब नहीं है।
जो बादशाह हुए थे, अब हो रहे भिखारी ॥२॥
विद्या कला व कौशल, सब हो गये रवाना।
उस बिन जगह जगह पर, होती है आज ख्वारी ॥३॥
इस नींद से उठो तुम, परभात हो चुका है।
घर घर में फिर से करदो, विद्या का पाठ जारी ॥४॥
सेठो व साहुकारो, क्या देखते हो हमको।
प्रण आज से करो तुम, विनती यही हमारी ॥५॥
ऐ जैन भाइयो अब, कहां है धर्म तुम्हारा।
गर्दन पे गौ के हरदम, चलती है अब कुठारी ॥६॥
भारत सपूत बनकर, दुनियां को कर दिखाओ।
भारत के भाई जागो, सुधरे दशा तुम्हारी ॥७॥
विद्यार्थी खड़े हैं, विद्या का दान दो अब।
कहते हैं हम सभी मिल, नैया चले हमारी ॥८॥

१९—उठो जागो होश संभालो [ग़ज़ल]

पड़े हो बन्धु क्यों सोते, उठो जागो उठो जागो।
अमोलक क्यों समय खोते, उठो जागो उठो जागो ॥१॥

निहारो आपके साथी, बढ़े जाते हैं सब आगे।
आप क्यों खा रहे गोते, उठो जागो उठो जागो ॥२॥
धँसे हैं कर्म पथ में सब, रहे कर उन्नति अपनी।
आप पद पद पर हैं रोते, उठो जागो उठो जागो ॥३॥
किया मैदान उन्नति का, सभी ने साथ मिल जुल कर।
फूट के शूल तुम बोते, उठो जागो उठो जागो ॥४॥
जगाते हैं तुम्हें भाई, तुम्हारे धर्म के बन्धु।
नहीं क्यों तुम सजग होते, उठो जागो उठो जागो ॥५॥
अंधेरा छा रहा तुमको, न दिखता कर्म पथ अपना।
नहीं क्यों नेत्र निज धोते, उठो जागो उठो जागो ॥६॥
धर्म धन, ज्ञान, बल, साहस, तुम्हारा लुट गया सारा।
नहीं कुछ भी रहा पोते, उठो जागो उठो जागो ॥७॥
रहोगे यों पड़े सोते, कहो कब तक अरे 'वत्सल'।
खोल आंखें नहीं जोते, उठो जागो उठो जागो ॥८॥

२०—क्या सीखे [गज़ल] ✓

मंजिल पे चढ़के भी हम, नीचों को गिराना सीखे।
पुरखा थे तरण-तारण, हम डूब मरना सीखे ॥१॥
जो कुछ कहा उन्होंने, करके उसे दिखाया।
हम कागजी सफो पर, प्रोग्राम रचना सीखे ॥३॥
महावीर पार्श्व जैसे, उपसर्गहर थे जिनके।
हम आज उनके बेटे, चुहिये से डरना सीखे ॥४॥

भर भर के प्रेम प्याले, जग को रहे पिलाते ।
ब्रांडी की घूंट पीकर, गलियों में पडना सीखे ॥५॥
जिनदेव के अलावा, मस्तक झुका न जिनका ।
साहब के सामने वे, नाकें रगड़ना सीखे ॥६॥
दरवाजे पे जिन्हों के, बंधते थे लाखों हाथी ।
साइकिल पे आज चढ के यारो अकड़ना सीखे ॥७॥
समझावे 'राम' कैसे, उनको बताओ तुमहीं ।
बन बन के जो सयाने, खुद ही बिगड़ना सीखे ॥८॥

२१—लगादीजे [कव्वाली]

द्रव्य अपने को विद्या में, लगादीजे लगादीजे ।
धरम रक्षा में धन अपना, लगादीजे लगादीजे—टेक ॥
अविद्या देशमें छाई, नहीं निज पर नजर आता ।
जला कर ज्ञानका दीपक, दिखादीजे दिखादीजे—द्रव्य ॥ १ ॥
रस्में बदते आकर के, किया है नाश जाति का !
उन्हें विद्या के बलसे अब, हटादीजे हटादीजे—द्रव्य ॥ २ ॥
तुम्हारी जातिके बच्चे, पढ़े जो गर कालिज में ।
बने निज धर्म के दुश्मन, बचादीजे बचादीजे—द्रव्य ॥ ३ ॥
बनाओ ज्ञानके मन्दिर, गुरुकुल स्कूल औ कालिज ।
उन्हें जिन धर्मकी शिक्षा दिलादीजे दिलादीजे—द्रव्य ॥ ४ ॥
बिना जिनधर्म के जाने, भटकते हैं बहुत भाई ।
दयामय मार्ग शिवपुरका, बतादीजे बतादीजे—द्रव्य ॥ ५ ॥

२२—खर्चीला भारत

[तर्ज—मेरे मौला बुला लो मदीने मुझे]

खर्चा बहुत बढ़ा अब बन्द करो ।
होता फिज़ूल खर्चा सभी दूर करो-टेक ॥
रोटी बिना बन्धु करोड़ों आज भारत में रहे ।
मर रहे हैं मौत बिन कई कहते आंसू झर रहे ।
ऐसे दीन बन्धु की वहार करो—खर्चा०॥१॥
वस्त्र छोड़े देश के और पहनते विदेशी हो ।
भूखे बने कायर बने सर्वस्व अपना खोये हो ।
अब तो वस्त्र स्वदेशी धारण करो—खर्चा०॥२॥
बीड़ी सिगरेटों में जाते क्रोड़ों रुपैये सालके ।
नाश होता तन धनका डूबते हो जानके ।
कुछ धर्म अधर्म का ख्याल करो—खर्चा०॥३॥
मोटे बनके व्याह में हजारों रुपये खर्चते ।
नित नये पकवान करके श्रीमन्त होना चाहते ।
कुछ दुःखियों का भी तुम ख्याल करो-खर्चा०॥४॥
जैन जाति बन्धुओ अब ख्याल करना है सही ।
जाति सुधारन कारणे सर्वस्व देना है सही ।
हीरालाल कहे खर्चा कमी करो—खर्चा०॥४॥

२३—उद्‌बोधन [गजल]

जैन जाति अपनी, रक्षाके लिये तैयार हो ।
सो चुकी मुद्दत तलक, अब नींद से वेदार हो—टेक ॥

दस सालमें इक लाखकी, है हो रही तुझमें कमी ।
रोक दे रफ़्तार[१] ये, गर जिन्दगी दरकार हो—जैन० ॥१॥
रस्म बद डाकू जो तेरा, ले गये सो ले गये ।
बस आइन्दाके लिये, अब क़ौम तू हुशियार हो—जैन० ॥२॥
जल्द उठ करके बना तू, पुख्तादस्तुरुल[२] अमल ।
बद कर अनमेल शादी, जो तेरा उद्धार हो—जैन० ॥३॥
सगठन का मंत्र तुझको, सिद्ध हो जाये अगर ।
कौनसा वह काम है जो, फिर तुझे दुश्वार[३] हो—जैन० ॥४॥
है नहीं ताक़त कोई जो, तुझ पे गालिब[४] आ सके।
हाथ में सच्ची अहिंसा की, अगर तल्वार हो—जैन० ॥५॥
सम्यक्त्व और ज्ञानाचरण, गर शुद्ध हो जायें तेरा ।
तसलीमे खम[५] कदमों पै तेरे, आज फिर संसार हो-जैन० ॥६॥
जाति रक्षाकी जिन्हें, कुछ भी जरा चिन्ता नहीं ।
ऐसे जीवन के लिये, शिवराम सौ धिक्कार हो—जैन० ॥७॥

२४—युवक सम्बोधन [कव्वाली]

सुनों ऐ नौ जवानो तुम, अरज तुमको सुनानी है ।
मगर टुक ध्यान से सुनना, मेरी दुःख की कहानी है—टेक ॥
जरा देखो नजर भर कर, दशा क्या हो गई अपनी ।
हमारे धर्म की मित्रो, मिटी जाती निशानी है—सुनो० ॥ १ ॥
कभी दिन था, नजर आते, सभी जैनी धरातल पर ।
न तेरह लाख भी अब तो, हुई कैसी ये हानि है—सुनो० ॥२॥

---

१ चाल, २ नियम, ३ कठिन, ४ कब्जा, ५ सिर झुकाना

उठो अब ख्वाब गफ़लत से, वक्त नहीं है सोने का ।
देश उद्धार की आशा, तुम्हीं में सबने मानी है—सुनो०॥३॥
पर उपकार की ख़ातिर, करो तन धन को तुम अर्पण ।
रहे जो स्वार्थ में अन्धा, वृथा यह जिन्दगानी है—सुनो०॥४॥
उठालो हाथमें शिवराम, अहिंसा धर्मका झंडा ।
करो परचार जिनमत का, न जिसका कोई सानी है-सुनो०॥५॥

२५—मनोकामना

[तर्ज—जिन्दगी क़ौमकी, ख़िदमत में लगादूं भगवन्]

जैन जाति फिर तू ऐसे बशर१ पैदाकर ।
तेरा गौरव जो बढावे, वो पिसर२ पैदाकर—टेक ॥
जगमें अहिंसा का जो, आन बजादे डंका ।
वीर भगवान से जिनराज, अमर पैदा कर—जैन०॥१॥
रानी राजा का जो, शील डिगाना चाहे ।
ना डिगे वह सुदर्शन, गृहस्थ सुनर पैदाकर—जैन०॥२॥
तात बच पालने को राज्य को ठोकर मारे ।
राम लछमन से, दशरथ के पिसर पैदाकर—जैन० ॥३॥
शत्रु अपने का, उपकार करे जो हरदम ।
धीर श्रीपाल, कोटि भटसे बशर पैदाकर—जैन०॥४॥
देश हित वासते, सर्वस्व लुटादे अपना ।
सेठ भामाशाह से, देश फ़ख़र३ पैदाकर—जैन०॥५॥
फूंक उत्साह जादू, मत्र भजन का कोई ।
मुर्दा जातिमें शिवराम असर पैदाकर—जैन ॥६॥

१ मनुष्य, २ पुत्र, ३ देशाभिमानी,

२६—विधवा के हृदयोद्गार

[तर्ज—ज़र सिकंदरने जमा कर, कह दिया मैं हूँ खुदा]

हाय किस्मत क्या है बिगड़ी ! दुखः पड़ा है इन दिनों ।
उठ गया हा ? ताज सरसे, भाई मेरा इन दिनों—टेर ॥

लाड़ली थी अपनी माँकी, बाप करता प्यार था ।
पूछता कोई न मुझको, हाय प्यारो इनदिनों ॥ १ ॥

भाई कहता बहन मेरी, भावजें प्यारी ननद ।
देखता ना आँख भरके, हाय ! मुझको इन दिनों ॥ २ ॥

सास थी वो, वारि मुझपे, नेह ससुर की क्या कहूँ ।
फिर गई तक़दीर उलटी, हाय ? मेरी इनदिनों ॥ ३ ॥

हाय ? रातों तारे गिनती, झिड़कियाँ दिन भर सहूँ ।
सूज आई आँख मेरी, रोते-रोते इन दिनों ॥ ४ ॥

बादलों की गड़गड़ाहट बिजली चमकी भली ।
पर न बरसी हाय बारिश, फिर गई ऋतु इनदिनों ॥ ५ ॥

मौर आये आम पर, मुझ को फल की आस थी ।
खिर गया सिरमौर ;फलदा, हाय ! मेरा इनदिनों ॥ ६ ॥

नाथ ! अब तो लो चरण में, दुख सहा जाता नहीं ।
मौत की गिनती हूँ घड़ियाँ, हाय ! बैठी इन दिनों ॥ ७ ॥

२७—अब भी ब्याह करोगे?

[तर्ज—विपत में सनम के संभाली कमलिया]

बुढ़ापा है अबतो न शादी करावो।
तरस कुछ तो भारत की हालत पे खावो ॥ १ ॥
लुटाके हज़ारों रुपयों की थैली।
न अब नौशा बनके स्वगौरव घटावो ॥ २ ॥
मुंडा डाढ़ी मूंछें, लगा मौड़ सरपे।
जहालत से अपनी न जगको हंसावो ॥ ३ ॥
बनाके यह हाय बेटी सी कन्या।
न भारत में अब विधवायें बढ़ावो ॥ ४ ॥
धरम पुण्य करने की है यह अवस्था।
न कर यह जुल्म पाप भारी कमावो ॥ ५ ॥
जवानी में पूरी हुई गर न आशा।
तो अब कैसे पूरी यह होगी बताओ ॥ ६ ॥
बुढ़ापे की शादी का जीवन बुरा है।
अमर अबतो जीवन को जीवन बनावो ॥ ७ ॥

२८—बचपन की शादी

[राग—आशा०]

क्या हाल सुनाऊं मेरा। क्या०।
बाल लगन से व्यथित बहुत हूं, किया व्याधि ने डेरा—टेक ॥
काली भई यह खोपरी मेरी, अंखियां बीच अन्धेरा।
सीने में निर्बलता छाई, चित्त चिताघन घेरा—क्या० ॥ १ ॥

तनमें तिल भर ताकत नाहीं, सुख नहीं सांझ सवेरा।
नींद गई नैनन तें निशि में, दुखमय होत दुपहरा—क्या० ॥ २ ॥
वीर्य विनष्ट भया सब भाई, चिपटाया सब चेहरा।
रोटी जिमवे की रुचि नाहीं, बना यार मैं बहेरा—क्या० ॥ ३ ॥
हानि भई हित की वित्त की, अंत को नाहीं अवेरा।
वैद्य अरु डाक्टर से बिलकुल, नाहीं होत निवेरा—क्या० ॥ ४ ॥
दया धर्म में दाह लगाई, जीवन का रस जेरा।
केशव कहे कम भाग्य से आई, कपूत कहावन वेरा—क्या० ॥ ५ ॥

२६—फूट ने क्या किया ?

[तर्ज—कौन कहता है कि ज़ालिम को सजा मिलती नहीं]

कर दिया अब हिन्द को वीरान हा! इस फूट ने।
खो दिया सब हिन्द का सम्मान हा! इस फूट ने॥ १ ॥
थे यहां ईमान के पक्के सभी छोटे बड़े।
करदिये पर आज बेईमान हा! इस फूट ने॥ २ ॥
हर तरह जीवन सुखी था, पहले लेकिन अब किये।
भूख से सब मौत के महमान हा! इस फूट ने॥ ३ ॥
आते थे पढ़ने को यहां तुमसे विदेशी दूरसे।
अब तो तुमको कर दिया गतज्ञान हा! इस फूट ने॥ ४ ॥
लड़ मरे सब भाई भाई खून के दरिया बहे।
खाली कर दिखलाया कुरु मैदान हा! इस फूट ने॥ ५ ॥
चख रहा है फूट का फल अब तलक भी हिन्द यह।
खो दिया सारी तरह कल्याण हा! इस फूट ने॥ ६ ॥

फोड़ डालो फूट का सर जिस तरह तुमसे बने।
ऐ मनुज ! तुमको किया शैतान हा ! इस फूट ने ॥ ७ ॥

३०—फूट के पुजारियों की हालत

[तर्ज़—सियाराम अयोध्या बुला लो मुझे]

पापन फूट ने क्या-क्या बनाया तुम्हें।
पागल करके परस्पर लड़ाया तुम्हें—टेर ॥

हिन्द में पहले तुम्हें सारी तरह आराम था।
ग़ैर लोगों की ज़ुबां पे बस तुम्हारा नाम था।
अब तो कौड़ी से सस्ता बनाया तुम्हें—पा० ॥ १ ॥

प्राण देते थे कभी तुम भाई भाई के लिये।
हर समय तैय्यार रहते थे भलाई के लिये।
अबतो सबको सताना सिखाया तुम्हें—पा० ॥ २ ॥

धूम थी चारों तरफ़ पहले तुम्हारे सत्य की।
हर बशर को थी बड़ी श्रद्धा तुम्हारे सत्य की।
अबतो झूठों में अव्वल गिनाया तुम्हें—पा० ॥ ३ ॥

एक दिन तुम सब कला कौशल के वर भंडार थे।
शिष्य थे तब ये विदेशी तुम गुरु सरदार थे।
अब तो बुद्धू बनाके कुदाया तुम्हें—पा० ॥ ४ ॥

एक भाई ग़ैर से चौड़े खड़ा पिटता रहे।
दूसरा भाई बराबर देखकर हंसता रहे।
अब तो पशुओं से नीचा गिराया तुम्हें—पा० ॥ ५ ॥

प्रेम बल से फूट की हस्ती जहां से मेट दो।
एकता के सूत्र में बंध दिल से मैं को मेट दो।
अब तो वीर संदेश सुनाओ सभी-पा० ॥ ६ ॥

३१—प्रेम की शिक्षा-पानी और दूध से ॥

[तर्ज—राधेश्याम]

पानी पयवत् गर प्यार प्रीत की,
रीति सीख लें आप सभी।
तो इस जैन जाति दुखियारी के,
दुःख द्वन्द्व दूर हो साफ सभी ॥१॥
जब दीन हीन पानी विचारा,
'शरण दूध की जाता है।
नहीं दूध करे दूर दूर छीछी,
निज अंग समझ अपनाता है ॥२॥
अपना सफेद रंग प्रदान कर,
पानी को गले लगाता है।
जिस भाव आप खुद बिकता है,
उस ही से उसे बिकाता है ॥३॥
गुण ग्रहण दूध का करते ही,
पानी पयवत् बन जाता है।
भाइयों को गले लगाने का,
क्या उत्तम पाठ सिखाता है ॥४॥
जब आग धधकने लगी खूब,
और जलने की नौबत आई।

तो हिम्मत कर के दूध से,
पानी ने यह बातें फरमाई ॥५॥
मैं हूँ मौजूद कढ़ाई में,
तब तक न तुम परवाह करो ।
हे दुग्ध देव सानन्द रहो,
बैठो, मत मन में आह करो ॥६॥

दूध मित्र को रखा सुरक्षित,
खुद को जल ने जला दिया ।
प्रेम सहित अपनाने का,
यह बदला कैसा भला दिया ॥७॥

पृथक्त्व सहन कैसे करता,
पय, पानी प्राण प्यारे का ।
जब बिछुड़ गया एक मित्र हाय,
कुसमय में आज बिचारे का ॥८॥

बस चला उबल हो कर बेकल,
मैं भी जल कर मर जाऊंगा ।
चल बसा मित्र मैं जिन्दा रह कर,
फिर क्या मुंह दिखलाऊंगा ॥९॥

जब हलवाई ने लखा, दूध ने,
हो बेचैन उबाल लिया ।
झट समझ गया दिल की हालत,
एक चुल्लू पानी डाल दिया ॥१०॥

थोड़ा सा पानी पड़ते ही,
वस दूध शांत हो जाता है।
बिछुड़ा भाई मिल गया आज,
रो रो कर गले लगाता है ॥११॥
करो प्रेम परस्पर आप सभी,
सर फोड़ो कूट हत्यारी का।
ऋण उतार दो अब एल. आर.,
महावीर देव श्री स्वामी का ॥१२॥

३२—अछूत

[तर्ज—इक तीर फैंकता जा तिरछी कमान वाले]

दलितों को तंग कर के क्या फायदा उठाया।
अफसोस जो उठाया नुकसान ही उठाया ॥१॥
अन्त्यज अछूत पामर महानीच म्लेच्छ पापी।
अप शब्द बोल क्या क्या गौरव सभी नशाया ॥२॥
सम्बन्ध छोड़ सारे हा ! बैठे हो के पगज़े।
हां, हिन्द को तुम्हों ने मुरदार यों बनाया ॥३॥
दुर-दुर से तंग आ-आ कितने हुए विधर्मी।
अब भी तो हो रहे हैं फिर भी न होश आया ॥४॥
गो-भक्त की दशा में नफरत थी छाया तक से।
गो भक्षी हो सिराहने सादर बुला बिठाया ॥५॥
मिट के रहेगी हस्ती, बस यह रही सही भी।
दलितों को गर अमर अब सीने से न लगाया ॥६॥

३३—अछूत कौन ?

[तर्ज— सिमर नर महावीर भगवान]

वही हैं केवल एक अछूत, कि जिनकी खोटी है करतूत—टेक॥
दुनियां भर के चोर उचक्के, व्यभिचारी दुर्व्यसनी पक्के।
उचित उन्हें तुम दे दो धक्के, जो है पूत कपूत—वही० ॥१॥
कन्या बेच बेच धन खावे, द्विज हो मदिरा मांस उड़ावे।
परनारी से आंख लड़ावे, बन जोगी अवधूत—वही० ॥२॥
झूठा हलफ उठाने वाले, कट्टर धन धन खाने वाले।
बच्चों को बहकाने वाले, मलकर अंग भभूत—वही० ॥३॥
संस्थाओं के धन को खावे, झूठी हुंडी जाय स्वीकारे।
पगड़ी बीच बाजार उतारे, लुच्चे गुण्डे धूर्त—वही० ॥४॥
सेवक हैं जो सदा तुम्हारा, करता मैला साफ बिचारा।
क्यों करते हो उनको न्यारा, वे हैं अपनी सूत—वही० ॥५॥
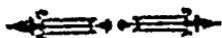
३४—आरजू ॥

[तर्ज—दिपत में सनम के संभाली कमलिया]

हृदय में हृदय अब मिलादो–मिलादो।
सफल सम्मेलन को बनादो–बनादो ॥ १ ॥
उठो वीर गुनियो न सुस्ती में सोवो।
कदम शीघ्र आगे बढ़ादो–बढ़ादो ॥ २ ॥
परस्पर की निन्दा ही झगड़े की जड़ है।
इसे मौन मुद्रा लगादो—लगादो ॥ ३ ॥

मैं ही हूं बड़ा, अन्य क्षुद्र हैं सारे।
अहंमन्यता यह हटादो–हटादो ॥ ४ ॥
गुणों को विचारो न व्यक्ति को देखो।
गुणी देख मस्तक झुकादो–झुकादो ॥ ५ ॥
करो बन्द फूट की नालियां गन्दी।
विमल प्रेम गंगा बहादो––बहादो ॥ ६ ॥
अतीत की बात न कोई उखेड़ो।
भविष्यत पै दृष्टि जमादो–जमादो ॥ ७ ॥
क्रिया ज्ञान दोनो लगा तुल्य पाखें।
गरुड़ बन के अब तो दिखादो–दिखादो ॥ ८ ॥
समाचारियां जो हैं टोलों की अपनी।
उन्हें ऐक्य रंग में सजादो–सजादो ॥ ९ ॥
बनालो सभी गच्छ एक सुधर्मा ।
अटल एक शासन चलादो–चलादो ॥११॥
करो कार्य ऐसा मुनिवृन्द ? अबतो।
विजय धाक जग में मचादो–मचादो ॥११॥

३५—मुनि शिक्षा [तर्ज़—रसिया]

अब सब हिल मिल मुनि महाराज, संघ में संप बढ़ाओरे–टेर ॥
पर परनति परिहर परमारथ पथ पग ठाओरे।
साधु सूरिपद पाय हाय, मत नाम लजाओरे ॥ १ ॥
पारस्परिक परापवाद तज, निज गुण गावोरे।
पृष्ट मांस भक्षण कर, गुण गौरव न घटाओरे ॥ २ ॥

पूर्व पुण्य से पाय उच्चपद, मत गर्वाओरे ।
रत्नाधिक को वंदन करते, क्यो शरमाओरे ॥ ३ ॥
प्रतिमा पूजन विधि वर्द्धक, फोटो न पड़ाओरे ।
मान काज मानक सम मानव, भव न गमाओरे ॥ ४ ॥
ज्योतिर्विद हो वृथा प्रथा, मत नयी चलाओरे ।
क्यों पूर्वज पुरुषों को हा, अनभिज्ञ बताओरे ॥ ५ ॥
प्रशस्त अपि भाषा संस्कृत को, पढ़ो पढ़ाओरे ।
तुच्छ कहें ताको तुरन्त, ठाणांग दिखाओरे ॥ ६ ॥
एक दूसरे के मुनिवर को, मत बहकाओरे ।
वत्सलता उरधार भले हो, ज्ञान सिखाओरे ॥ ७ ॥
द्विरददन्त सम दम्भ क्रिया कर, जनन रिझाओरे ।
क्यों लोकोक्ति दीपक की, चरितार्थ बनाओरे ॥ ८ ॥
यथा तथा कर वृथा, कीर्ति कमला न कमाओरे ।
द्वेषयुक्त लिख लेखदेव, मत द्वन्द्व मचाओरे ॥ ॥ ९ ॥
होली सो तो होली बस, मत धूल उड़ाओरे ।
शूरवीर गम्भीर धीर, महाराज कहाओरे ॥ १० ॥
यही अन्त में विनय परस्पर, मिलो मिलाओरे ।
जगमग जग में जैन धर्म की, ज्योति जगाओरे ॥ ११ ॥

❀ राष्ट्रीय विचार ❀

३६—मातृवन्दन

[तर्ज़—इक तीर फेंकता जा, तिरछी कमान वाले]

अय मातृ भूमि तेरे, चरणों में शिर नमाऊं ।
मैं भक्ति भेंट अपनी, तेरी शरण में लाऊं ॥ १ ॥

माथे पे तू हो 'चन्दन, छाती पे तू हो 'माला ।
जिह्वा पे गीत तू हो, मैं तेरा नाम गाऊं ॥ २ ॥

मानी समुद्र जिसकी, धूलि का पान करके ।
करता है मान तेरा, उस पैर को नमाऊं ॥ ३ ॥

जिससे सपूत उपजे, गांधी, तिलक के जैसे ।
उस तेरी धूलि को मैं, निज शीश पर चढ़ाऊं ॥ ४ ॥

देशाभिमान वाले, चढ़ कर उतर गये जो ।
गोरे रहे न काले, तुझको ही एक पाऊं ॥ ५ ॥

सेवा में तेरी सारे, भेदों को भूल जाऊं ।
वह पुण्य नाम तेरा, निशिदिन सुनूं सुनाऊं ॥ ६ ॥

तेरे ही काम आऊं, तेरा ही मन्त्र गाऊं ।
मन और देह तुम पर बलिदान मैं चढ़ाऊं ॥ ७ ॥

३७—भारत के शौक़ीन

[तर्ज़—भारत देश में है फूट बड़ो बदकार]

विदेशी माल से रे, होगया हिन्द वीरान—टेर ।

अपनी रोटी देकर फैशन, लेते हैं नादान ।

मारे भूखके तड़प २ कर, यम के हों मेहमान–वि० ॥१॥

साठ क्रोड़ का वस्त्र पहन कर, दिखलाते हैं शान ।

चार क्रोड़ की मदिरा पीकर, होते हैं हैवान–वि० ॥२॥

पांच क्रोड़ की बिस्कुट खाकर, बनते हैं बलवान ।

तम्बाकू में दोय क्रोड़का, करते हैं अवसान–वि० ॥३॥

पांच क्रोड़ की मोटर दौड़ा, कहलाते धनवान ।

चार क्रोड़ की खाय दवाई, रखते हैं निजप्राण–वि० ॥४॥

सात क्रोड़ का तेल लगाते, खोते दीन ईमान ।

नव्वे लाखका चमड़ा लेते, देखो दयानिधान–वि० ॥५॥

उन्नीस क्रोड़ की शक्कर खाकर, मीठी करें ज़ुबान ।

एक अर्ब के खेल खिलौने, बालक तोड़े तान-वि० ॥६॥

अमर बिगाड़ो मत ना अब तो, भारत का सन्मान ।

छोड़ विदेशी वस्तु देश पर, हो जावो कुर्बान–वि० ॥७॥
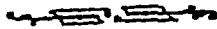
३८—विदेशी वस्त्र ने क्या किया ?

[तर्ज़—श्री राम ने घर छोड कर बतला दिया कि यूं]

वस्तर विदेशी ने तुम्हें, यूं ख्वार करदिया ।

हरइक तरह से अब तुम्हें लाचार कर दिया ॥ १ ॥

आते ही इसने छीन ली रोटी गरीबों की ।
चौपट स्वदेशी वस्त्र का व्यापार करदिया ॥ २ ॥
हरसाल चांदी खींचता है हिन्द से देखो ।
अब क्या है खाली ढोल का आकार करदिया ॥ ३ ॥
गौ आदि पशुओं की लगे चरबी बड़ी भारी ।
ज्यादह कहें क्या भ्रष्ट सब आचार करदिया ॥ ४ ॥
फैशन ही फ़ैशन दीखता है बस जिधर देखो ।
बस सादगी का सर्वथा संहार करदिया ॥ ५ ॥
बेकार लोग बनते हैं नित चोर और डाकू ।
अच्छे भलों को इसने ही बदकार करदिया ॥ ६ ॥
छोड़ो अमर करलो प्रतिज्ञा, आजही तुम सब ।
इस नीच ने तो जीना भी, दुशवार करदिया ॥ ७ ॥

३९—खादी

[तर्ज—तुम्हें अपना तनमन लगाना पड़ेगा]

अहिंसा का जल्वा दिखायेगी खादी ।
वतन को आजादी दिलायेगी खादी ॥ १ ॥
करोड़ों तड़पते जो भूखे बिचारे ।
उन्हें मीठा भोजन खिलायेगी खादी ॥ २ ॥
विदेशों को जाता है जो द्रव्य अरबों ।
ये आफ़त का जरिया मिटायेगी खादी ॥ ३ ॥
है हरजा फैली जो अनहद बीमारी ।
धंधे सब को फिर से लगायेगी खादी ॥ ४ ॥

भरे चर्बी से हैं जो वस्त्र विदेशी।
उन्हीं की जगह को शोभायेगी खादी ॥ ५ ॥

४०—खद्दर [तर्ज़—विपत में दानम के संभालो कमलिया]

सुखी हिन्द को यह बनायेगा खद्दर।
गुलामी से सब को छुड़ायेगा खद्दर ॥ १ ॥
विदेशों को जाता करोड़ों रुपैया।
यह सारा का सारा बचायेगा खद्दर ॥ २ ॥
करोड़ों जो रोते हैं हा! भूखे भाई।
सभी को हमेशा हंसायेगा खद्दर ॥ ३ ॥
मिटा के अदावत का नामो निशां अब।
परस्पर मुहब्बत बढ़ायेगा खद्दर ॥ ४ ॥
हुए हिन्द वाले जो फैशन पे पागल।
सभी को ठिकाने पे लायेगा खद्दर ॥ ५ ॥
विदेशी वसन से महापाप यों ही।
जो होता है उसको हटायेगा खद्दर ॥ ६ ॥
अमर मारा भारत हुआ हाय गारत।
इसे फिर से ऊँचा उठायेगा खद्दर ॥ ७ ॥

४१—भारत को सन्मति

[तर्ज़—बिगड़ी हुई तक़दीर बनाई नहीं जाती]

भारत! तुझे इस फूट ने नीचे गिरा दिया,
कैसा गिराया, धूल में ही बस मिला दिया ॥१॥

आ ! सुख के स्वर्णासन पै समुदित बैठने वाले,
दु:ख की भयावह शूली पर तुझको बिठा दिया॥२॥
सब देश तेरे दास थे, तू स्वामी था सब का,
दासों का भी अब दास हा तुझको बना दिया ॥३॥
बहती कहां अब वह अलौकिक प्रेम की गंगा,
दुर्गन्धपूरित द्वेष का नाला बहा दिया ॥ ४ ॥
सर्वस्व दे गुरु की पिता की भक्ति है कहां अब,
गुरु से पिता से शिष्य को, सुत को भिड़ा दिया॥५॥
ज्यादा कहें क्या, कर दिया, सब सद्गुणों का लोप,
बस दुर्गुणों का अब अटल अड्डा जमा दिया॥६॥
अब भी संभल ले प्राप्त कर लें फिर अमर गौरव,
वो ही हुआ सुखिया, जिसने इसे भगा दिया॥७॥

४२—स्वदेश प्रेम—[तर्ज—यार खुदगर्ज जमाना है]

हमारा प्यारा भारत देश—टेक॥

सब देशों का ताज कभी था, जो ये भारत देश ।
दीन हीन पराधीन हुआ वह, सहता आज क्लेश—हमारा०॥१॥
हो चुकी अब सीमा दु:ख की, अरज सुनो अखिलेश ।
आत्मबल को प्राप्त करें हम, कृपा करो अखिलेश-ह० ॥२॥
देवें तिलांजलि फैशन को अब, होवे सादा भेष ।
वस्तु विदेशी को विष समझें, छुएँ नहीं लवलेश —हमारा०॥३॥
हिन्दू-मुसलमां ऐक्य बढ़ावें, छोड़ परस्पर द्वेष ।
प्रेम भाव से मिलकर दोनों, गायें राग स्वदेश—हमारा० ॥४॥

श हितैषी गांधी का अब, मानें सब सन्देश।
कटे गुलामी की यह बेड़ी, हो स्वराज्य हमेश—हमारा० ॥५॥
शान्ति सुख तब ही घर-घर हो, भागें सर्व क्लेश।
धर्म अहिंसा धार निरन्तर, भज शिवराम जिनेश-हमारा० ॥६॥

४३—देश दर्शन [तर्ज—पहलू में यार है मुझे उसकी खबर नहीं

ऐ हिन्द किसने है तुझे बरबाद कर दिया।
मेरे निवासियों ने ही बरबाद कर दिया—टेक ॥
का अहिंसा धर्म का बजता यहाँ रहा।
हा ! हा ! मिथ्यात्व ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥१
हैं कहां मुनि अर्जिका, पण्डित प्रवर महान्।
इस काल पंचम ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥२॥
यहां पर थे राज्य करते धर्मज्ञ रजपूत।
आपस की फूट ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥३॥
यहां पर थे सेठ घने करोड़-लखपती।
फिजूलखर्ची ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥४॥
कमजोर पस्ते[१] होसला सन्तान क्यों हुई।
बचपन की शादी ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥५॥
सन्मतो हिरफत तेरी जाती रही कहाँ।
विदेशी चीजो ने मुझे बरबाद करा दिया—ए० ॥६॥
हिकमत सायंस फिलासफी ज्योतिष तेरी कहां।
हा ! हा ! अविद्या ने मुझे बरबाद कर दिया—ए० ॥७॥

आते थे इल्म सीखने यहाँ गैर मुल्क से ।
आराम-तल्बी ने मुझे बरबाद कर दिया-ए० ॥८॥
प्लेग और अकाल की क्यों आफतें पड़ीं ।
गौवों पे जुल्म ने मुझे बरबाद कर दिया-ए० ॥९॥
आख़िर जवाब हिन्द का शिवराम अब तू सुन ।
आलस तुम्हारे ने मुझे बरबाद कर दिया-ए०॥१०॥
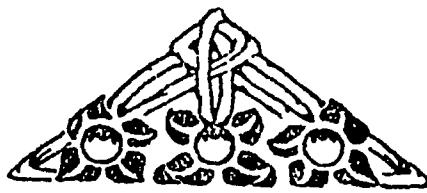
सुमन संचय

जिसको प्यारी है नहीं, निज भाषा निज देश;
पशुसा वह नर डोलता, नर का धर कर वेश ।
मरना भला है उसका, जो अपने लिए जिये;
जीता है वह जो मर चुका, सबकी भलाई के लिये।

१ गिरा हुआ, २ कारीगरी

❀ स्त्री-सुधार ❀

४४—भारत की देवियां

[तर्ज़—बिगड़ी हुई तक़दीर बनाई नहीं जाती]

भारत की नारी एक दिन देवी कहलाती थीं।
संसार में सब ठौर, आदर मान पाती थीं ॥१॥
वनवास में श्रीरामजी के साथ में सीता।
महलों के वैभवों को घृणा करके ठुकराती थीं॥२॥
राणी किरण लेकर कटार घायल शेरनी की ज्यों।
अकबर से सम्राट की छाती पै चढ़ जाती थीं॥३॥
महारानी झांसीवाली अपने देश की खातिर।
तलवारें दोनों हाथों से रण में चमकाती थीं॥४॥
चित्तौड़ में यवनों से अपने सत की रक्षा को।
हँस-हँस के अग्निज्वाला में सब ही जातीं थीं ॥५॥
पत्नी श्री मण्डनमिश्र की शास्त्रार्थ करने में।
आचार्य शंकर जैसों के छक्के छुड़वाती थीं ॥६॥
मार्तण्ड सा कटु तेज था वर क्या 'अमर' पूछो।
दुष्कर्मकारी गुण्डों की आंखें मिच जातीं थीं ॥७॥

४५—स्त्री-शिक्षा

[तर्ज़—दाग़ रहा है आसमां यह सब समां कुछ भी नहीं]

देवियो, कुछ ध्यान अपने पर, नहीं लाती हो तुम।
खो दिया गौरव सकल, अब किस पे इतराती हो तुम ॥ १ ॥

सास से ठनती लड़ाई, खाने को टुकड़ा नहीं ।
कुगुरुओं को माल ताजा रोज, चटवाती हो तुम ॥ २ ॥
जेठ से सुसरे से पर्दा, कोठे में घुस बैठना ।
पूछे पै उत्तर न बिल्कुल, गूंगी बन जाती हो तुम ॥ ३ ॥
फेरी वाले छाकटे लुच्चे बिसाती को बुला ।
खूब हंस हंस बात करती, हो न सकुचाती हो तुम ॥ ४ ॥
गंगा जमुना पर हजारों, यात्रियों के बीच में ।
झिलमिली धोती में न्हा, नहीं नंगी शर्माती हो तुम ॥ ५ ॥
हो गया बच्चा जरा बीमार, बस मस्जिद चलीं ।
खेद है गुंडों से उसके मुंह मे थुकवाती हो तुम ॥ ६ ॥
नाक में दम है पती का, जेवरों की मांग से ।
खाते पीते वक्त बड़ बड़, करके दुखियाती हो तुम ॥ ७ ॥
लद लदा कर रेशमी, वस्त्रों व गहनों से सदैव ।
मेलों में गुण्डों के धक्के, खाने क्यों जाती हो तुम ॥ ८ ॥

४६—झूठा झगड़ा छोड़ दो [तर्ज—समझ मन बावरे]

बहनो छोड़ दो री अब, यह झूठा झगड़ा करना ॥ टेर ॥
सेढ़ शीतलादिक वहमों से, अब बिल्कुल मत डरना ।
झूठा वहम तुम्हें है इनका, इनमें कुछ भी असर ना—ब० ॥ १ ॥
पीरों की कबरों पे जा जा, अब ना शीश रगड़ना ।
तीन काल में नहीं हो सकता, इनसे कुछ दुःख हरना—ब० ॥२ ॥
जिन गुण्डों ने इसी ढोंग से, बतलाया दुःख हरना ।
ऐसों के शैतान होने में, मानों जरा कसर ना—ब० ॥ ३ ॥

वकरे मुर्गे मार मार जो, चाहे पेट निज भरना ।
फिर यह जगदम्बा कैसी है, आता हगर नजर ना–ब० ॥ ४ ॥
मांसाहारी नीच मनुज ही, करें पसन्द यह करना ।
क्योंकि मांस खाने की सिद्धि, नहीं होती है वरना–व० ॥ ५ ॥
घर में मां और सासू रोवे, होती कभी कदरना ।
वाहर नकली मात पूजती, फिरती जरा सबर ना–ब० ॥ ६ ॥
माता वेटा देती है यह, वात न दिलमें धरना ।
रहो सदा निज भाग्य भरोसे, करना कभी फिकर ना–व० ॥ ७ ॥
बहनो झूठी आशाओं से, वहै न सुख का झरना ।
जो चाहो कल्याण अमरतो, गहो वीर का शरना–व० ॥ ८ ॥

४७—शीतला माता [तर्ज—भरोसा क्या जिन्दगानी का]

अब तो छोडो झटपट द्वार, शीतला माता का (ध्रुव)
महारानी जगदम्बा कहलाती, फिर भी गधा सवारी पाती ।
पुजारी भंगी और चमार, दलद्दर देखो माता का–अ० ॥ १ ॥
मठ में सड़ियल कुत्ते घुस जावें, जीभ से चाटें चरण लगावें ।
चलते मारें मूत की धार, तर करदें तन माता का–अ० ॥ २ ॥
भगतों ने जा छतर चढ़ाया, ले चोरों ने कांख दवाया ।
नंगी कर दई वस्त्र उतार, वोल नहीं निकला माता का–अ० ॥३॥
बारहों महीने भूखों मरती, तुमरे वासी टुकड़े चरती ।
कैसे भर देगी भंडार, खुद ही तंग हाथ माता का–अ० ॥ ४ ॥
पत्थर पूजत आयू वीती, अब तो कराली खूब फजीती ।
होगा कभी नहीं उद्धार, झूठा धोखा माता का–अ० ॥ ५ ॥

४८—तब महिला कहलायेंगी

ललनायें भारत की सच्ची, तब महिला कहलायेंगी' ।
विद्या की नूतन ज्योति से उन्नति कमल खिलायेंगी ॥
गृह-कार्यों में दक्ष बनेंगी, प्रेमामृत बरसायेंगी ।
शील शांति श्रद्धा भक्ति से, पतिव्रत धर्म सिखायेंगी ॥
गार्हस्थ जीवन सुखमय हो, उत्तम संतति पायेंगी ।
कुन्ती मन्दालसा वीर, विदुला सम मान बढ़ायेंगी ॥
ललनायें सच्ची 'तव महिला कहलायेंगी ॥ १ ॥
सीतासी सतवन्ती बन कर, कठिन कष्ट भी पायेंगी ।
धर्म हेतु शैव्या रानी बन, काशी में बिक जायेंगी ॥
स्त्री शिक्षा अनसुइया का, उत्तम पाठ पढ़ायेंगी ॥
सरोजिनी सदृश भारत का, नन्दन विपिन खिलायेंगी ।
ललनायें भारत की सच्ची, 'तब महिला कहलायेंगी ॥ २ ॥
भाषा भेष भाव परदेशी, मन से सब बिसरायेंगी ।
भारतीय सभ्यता पुरातन, पुरुषों में फैलायेंगी ॥
गृह देवियां लक्ष्मी बन कर, कुल की लाज रखायेंगी ।
राम, वीर, प्रहलाद धर्म कृष्ण, अवतारी प्रगटायेंगी !
ललनायें भारत की सच्ची 'तब महिला कहलायेंगी ॥ ३ ॥
काया पलट समय सतयुग सा कामिनियां जब लायेंगी ।
साक्षात देवी स्वरूपिणी सुन्दरियां बन जायेंगी ॥
'व्यापारे वसते लक्ष्मी' का मूल मन्त्र अपनायेंगी ।
कौशलमयी कलायें फैला जीवन ज्योति जगायेंगी ॥
ललनायें भारत की सच्ची 'तब महिला कहलायेंगी ॥ ४ ॥

देशभक्त केशरी वीर लालों को कंठ लगायेंगी।
राष्ट्रीय संग्राम मध्य जब हंस हंस शीश चढ़ायेंगी।
'त्रिवेदी' राष्ट्रीय रंग की अनुपम झलक दिखायेंगी।
जय भारत, जय २ भारत कह विजय ध्वजा फहरायेंगी।
ललनायें भारत की सच्ची 'नव महिला कहलायेंगी ॥ ५ ॥
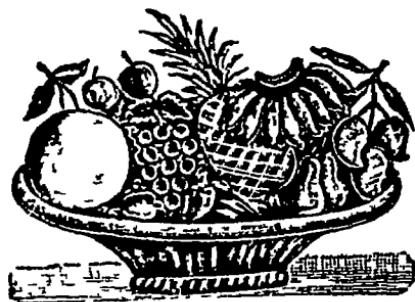
❀ कलयुगी-संसार ❀

४६—समय फेर

[तर्ज—बूंटी लाने का कैसा बहाना हुआ]

इक दम कैसे यह उल्टा ज़माना हुआ—इक दम—टेर ॥

जग में छाया अज्ञान, हुए पापी महान ।
मारे गौओं की जान, महा सुख की जो खान ।
दया धर्म तो यहाँ से रवाना हुआ—इक०॥१॥

थे नरोत्तम जहाँ, नहिं उनका निशां ।
हैं मुनीश्वर कहाँ, नहिं पण्डित यहाँ ।
काल पंचम का अब जो बहाना हुआ—इक०॥२॥

मरे पिता व मात, हुए लाखों अनाथ ।
पूछी जिनकी न बात, पड़े म्लेच्छों के हाथ ।
यह प्लेगो क़हत का जो आना हुआ—इक०॥३॥

जा विदेशों को माल, हुआ भारत कंगाल ।
बिगड़ी सारी है चाल, हुआ हाल बेहाल ।
परदेशी का जब से यहां आना हुआ—इक०॥४॥

धर्म कर्म आचार, भ्रष्ट हुआ व्यवहार ।
रहा कुछ ना विचार, होवे घर घर तकरार ।
अब तो भाई से भाई बेगाना हुआ—इक०॥५॥

खोलो शिवराम नैन, धर्म जाता है जैन।
गर चाहो सुख चैन, सो मानो जिन वैन।
जिससे जीव. का मुक्ति में जाना हुआ—इक०॥६॥

५०—कलियुगी-नर [पीलु]

ऐसे पापी नर होवेंगे कलयुग में—टेक॥
पगड़ी बांधें पेच समारें, ठमक ठमक पांव देंगे रामा।
गलियों के बीच फिरे बावरे, नार पराई पापी तकत फिरेंगे-कल०
भूखे प्यासे साधु आवे, चिमटी चून न देंगे रामा।
जब राजा का दंड पडेगा, रोक रुपैया पापी गिन गिन देंगे-कल०
मात बहिनको कछु न माने, उनके संग बहेंगे रामा।
सासु सुसरा रोज जिमावें, भाइयों से पापी लड़त फिरेंगे-कल०
सच्चे पंथ से छूट छूट के, झूठे मारग लटेंगे रामा।
स्वारथ निरखा सदा फिरेंगे, परमारथ में पाई न देंगे-कल०
नीच वृत्ति के नृपति होंगे, वस्ती को कनड़ेंगे रामा।
निज निज धर्म सभी छोड़ कर, पाप में पापी परेंगे-कल०
लाल थंभ लोहे का धर बाई, उनके सग बधेंगे रामा।
तुलसीदास भजो भगवाना, पुण्य पाप दोनो संग चलेंगे-कल०

५१—न्यू लाइट ने क्या किया ?

[चाल—विपत में सनम ने संभाली कमलिया]

चली जब से यह अंगरेजी पलट्टू।
हुए हिन्दवाले तभी से निखट्टू॥१॥

डवल रोटी विस्कुट लगे अब तो अच्छे।
बाजारों की चाटों के हो रहे चट्टू ॥२॥

वचन की सच्चाई तो जाती रही सब।
लड़ाते हैं गप्पें यों ही लबड गट्टू ॥३॥

स्वदेशी न भाती है कोई भी शै अब।
विदेशों की चीजों पै हो रहे लट्टू ॥४॥

बुरी लगती अब तो स्वदेशी सुभाषा।
जनम ते ही सी० ए० टि० रटते हैं रट्टू ॥५॥

गुलामी का जीवन विताते निकम्मा।
बने सब के सब थार भाड़े के टट्टू ॥६॥

'अमर' सारे भारत में फैली बेकारी।
कमाई न धेला बने हैं बजरबट्टू ॥७॥
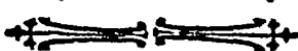
५२—पैसा [जमाना रंग बदलता है]

जमाना पैसे का है यार—टेर।
विन पैसे कोई बात न बूझे, भाईबन्धु परिवार—जमाना० ॥टेक॥
पैसे से आदर दुनिया में, कहलावे जरदार।
पैसा नहीं गांठ में आपनी, है मिस्ले मुरदार—जमाना० ॥१॥
पैसे बिन नहीं कदर जहाँ में, है जिन्दगी धिक्कार।
बिन पैसे के जात विगाड़े, है खुद घर की नार—जमाना० ॥२॥
पैसे ही से सब दुनियाँ में, करते हैं सत्कार।
बिन पैसे के शरीफ भी, कहलाता है मकार—जमाना० ॥३॥

पैसे बिन नहीं कोई किसी का, देख लिया संसार ।
पैसे से ही चलता है; कुल दुनिया का व्यापार—ज़माना० ॥४॥
बदमाशों से बेटी व्याह दे, हो पैसा कलदार ।
बिन पैसे के रहे कुंवारा, हो कितना हुशियार—ज़माना० ॥५॥
पैसा ऐसी चीज जहाँ में, दे फांसी से उतार ।
पैसे पे भाई भाई को दे जान से मार—ज़माना० ॥६॥
बिन पैसे बेचैन न हो तू, मालिक है करतार ।
तेरी मदद को भी आयेगा, सच्चा मददगार—ज़माना० ॥७॥

५६—पैसो [तर्ज़—मोहन गारो रे—राग देशी]
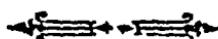
पैसो प्यारो रे, दुनियां ने लागे मोहन गारो रे-पै० ॥टेर॥
पैसा ने नर प्यारो लागे, जिम कायर ने कारो रे ।
अजब चीज़ दुनियाँ में पैसो कहे जग सारो रे—प० ॥१॥
पइसा खातिर परमेश्वर की, सोसो सोगन खावेरे
प्राण प्यारी ने छोड़ पुरुष, परदेशां जावे रे—पै०॥२॥
पैसा से दुनिया दे आदर, आओ आप पधारो रे ।
निरधन ऊभो टुग टुग जोवे, लागे खारो रे—प० ॥३॥
पैसा आगे पतो न लागे, जो परमेश्वर आवेरे ।
महादेव ने पारवती आ, बाहर कढ़ावे रे—पै० ॥४॥
कांणा खोड़ा लूला बहेरा ने, यो पैसो परणावे रे ।
निर्धन जग में छैल भंवर, पिण नार न पावे रे—पै० ॥५॥
मात पिता पैसा बिन बोले, है बेटो दुखदाई रे ।
बिन पैसा थी बेनड बोले, ओ काई को भाई रे—प० ॥६॥

बिन पैसा थी पड़ोधेड में, बोले सगी लुगाई रे।
सासु सुसरा बोले मिलियो बुरो जमाई रे—पै० ॥७॥
मुरदा ने पिन कोई न वाले, काग कुत्ता मिल खावेरे।
साव सगो भाई पैसा बिन नहिं बतलावे रे—पै० ॥८॥
पैसा ने जो धूल बराबर, समझे सो नर ज्ञानी रे।
नाथू मुनि शिष्य चोथमल कहे, सुनियो भव्य प्राण, रे-पै०॥९॥
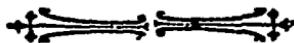
५४—कलियुग लीला [तर्ज—कव्वाली नथ्थासिंह की]

जमाना आगया कैसा, नहीं पापों से डरते हैं।
मिले जब पापका फलतो, दोष ईश्वर पे धरते हैं—टेक ॥
फरज अपना जो था पहिला, श्रीनवकार जपने का।
तना आलस अविद्यावश, नहीं जिनशास्त्र पढ़ते हैं—जमाना ०॥१॥
धरम मे हो गई नफरत, नहीं शुभ कर्म से मतलब।
वदी जो दिलमें आती है, वही करके गुजरते हैं—जमाना० ॥२॥
झूठ और छल-कपट चोरी, से जो जर हम कमाते है।
न परोपकार में खर्चे, न अपना पेट भरते हैं—ज़माना० ॥३॥
धरम के नाम तो पैसा भी, देना हो गया मुश्किल।
लुटावें ब्याह शादी में, सिर्फ़ शेखी पे मरते हैं—ज़माना० ॥४॥
रस्में बद हटाने को, अगर होती है पंचायत।
तो आपापंथी बन बन के, धरम में विघ्न करते हैं—जमाना० ॥५॥
मुताबिक अपनी मरज़ी के, अगर जो काम नहीं होता।
वो बहाना ढूंढ़ के कोई, वहीं पंचों में लड़ते हैं—ज़माना० ६॥

कभी मशहूर थी जग में, एकता जैन जातिकी ।
गजब अब तो सगे भाई, अदालत में झगडते हैं-जमाना० ॥७॥
धरम जब से किया रुखसत बना पापी यही भारत ।
तभी से मिली बीमारी, काल पर काल पड़ते हैं-जमाना० ॥८॥
डरो अब तो कुकर्मों से, रही है अब जिन्दगी थोड़ी ।
विचारो दिलमें ऐ शिवराम कि हम क्या काम करते हैं-जमाना०॥९॥

५५—कथा की कीमत (घनाक्षरी)

तजी मसूरकी दाळ कथा सुनो तजी मसूरकी दाल-टेक ॥
काम न विसरो क्रोध न विसरो, विसरो न मोह जजाल-कथा०॥१॥
अभ्यागत कोई आंगन आवत, ताको बतावत काल-कथा० ॥२॥
घर में आय बड़ाई करते हैं, कैसे दियो है निकाल-कथा० ॥३॥
ममता न भूले तन-धन घर की, क्रोधी बड़ा चंडाल-कथा० ॥४॥
सूरश्याम ऐसे कपटी जीव, कैसे उतरेंगे पार-कथा० ॥५॥

५६—हमदर्दी

[उठ गई दया निर्दयता घरघर छाई]
भाई से भाई करते वैर लड़ाई—टेक ॥
हैं हर बस्ती में, दीन अन्न बिन भूखे ।
नर नारी शिशु कन्या जिनके मुख सूखे ॥
है कठिन बहुत लोगों को पेट भराई-उठ गई० ॥ १ ॥
नहीं दे तुम हांके जाति फंड में पैसा ।
वेश्या को दें मन खोल, धर्म यह कैसा ?
झूठे ढोंगों में खर्चें सकल कमाई-उठ गई० ॥ २ ॥

नहिं दुर्लभ धनका उपयोग ये जाने ।
वे द्रव्य उड़ा कर करें काम मन माने ॥
नहीं होती इनसे तिल भर जाति भलाई—उठ गई० ॥ ३ ॥
पाषाण-हृदय नहिं करें तर्स दुखियों पर ।
हैं तन मन से कुर्बान चन्द्र-मुखियों पर ॥
वैश्यों ने चुटिया वेश्या मे कटवाई—उठ गई० ॥ ४ ॥
यदि है स्वबन्धु की तर्फ द्रव्य कुछ लेना ।
नालिश करने के लिये रजिष्टर देना ॥
खाजायं दूसरे लाखों रहे समाई—उठ गई० ॥ ५ ॥
भाई पर हमदर्दी दिखलाना सीखो ।
बिन हमदर्दी इनसान कभी नहिं दीखो ॥
मालूम नहीं हमदर्दी कहां विलाई—उठ गई० ॥ ६ ॥

५७—होली पर अधर्म की धूम

होली समझे पर्व पाप का, करें लोग नाना तूफान ।
शील धर्म आचार बिगाड़े, धिक ऐसे हिन्दुस्तान—टेर ॥
नहिं ईसाई, यवन, पारसी, करें पर्व पर निंदित काम ।
उन को भय अपने मालिक का, नहिं अधर्म में खर्चें दाम ॥
शील धर्मको कुचले पग से, धिक ऐसे हिन्दू कुलवान—होली० ॥ १ ॥
मद्रासी, दखनी, गुजराती, नहिं होली पर करें कुकर्म ।
बंगाली, पंजाबी, सिंधी, उनको अपना प्यारा धर्म ॥
शील धर्म आचार निबाहें, वे ही हैं सच्चे इनसान—होली० ॥ २ ॥

पूरब मारवाड़ के सुजनों, नहिं प्रभु को अधर्म मंजूर।
कर्मों का फल मिले जरूरी, चाहे जितने करो फितूर ॥
जन्म मनुज का पाया उत्तम, फिर क्यों खुद बनते हैवान—होली०॥३॥
शीलाचार गुमाने वाले, सभी कर्म हैं धर्म विरुद्ध।
किसी समय अधर्म नहीं अच्छा, पाप कर्म है सदा अशुद्ध॥
जान बूझ कर करें अनीति, धिक् ऐसे नर पशु अज्ञान—होली०॥४॥
उच्च कुलों के वैश्य भाइयो, नीच कर्म क्यों तुम्हें सुहाय।
भ्रष्ट गंदगी बेशर्मी में, मजा कौन सा तुमको आय।
नीचों की ममता नहीं अच्छी, रखो जरा कुल का अभिमान—होली०॥५॥
है पवित्र उत्सव होली का, धर्म मूल है यह त्यौहार।
राग रंग निर्दोष मनावो, होके प्रभु का शुक्रगुजार॥
लाज शर्म पर जमि धरते, नर पशुओं की यह पहिचान—होली०॥६॥
हिन्दू-जीवन सदा धर्ममय, नहिं विषय का धेली एक।
मनुज जन्म का पलपल महँगा, हरदम करना उत्तम नेक।
न मालूम क्यों जन्म बिगाड़ें, करके अधर्म भील समान—होली०॥७॥

—o◇o—

५८—धर्म का पतन

[तर्ज—सुनो मालम बहार आई झुलाये जिसका जी चाहे]

बहाना धर्म का करके गजब कैसा मचाते हैं।
अखिल मानव जगत पर जाल माया का बिछाते हैं ॥१॥
पत्थर पत्थर के देवों पर हजारों भैंसे और बकरे।
खटाखट खंजरों से खून के नाले बहाते हैं ॥२॥

खड़ी कर दीं कहीं ईंटें बनाई शीतला माता।
भगों-भग जातरी आते पुजापा ला चढ़ाते हैं ॥३॥
तरसते दो दो दाने को हजारों बन्धु अति भूखे।
हवन में घी मनों फूके अकल पर धूल जमाते हैं ॥४॥
बने एजेण्ट मुर्दों के चलाया श्राद्ध का धंधा।
पितर के नाम पर भूदेव ताजा माल खाते हैं ॥५॥
अछूतों को न घुसने दें कभी भी धर्मस्थानों में।
अगर सत्कर्म कर लें तो भी सर धड़ से उड़ाते हैं ॥६॥
बता कर हिन्दुओ को नीच काफिर जवानोंको।
खुदा ईश्वर पै मस्जिद मन्दिरों पै नित लड़ाते हैं ॥७॥
दबोचे कान बैठा धर्म, आगे धर्मवालों के।
'अमर' चाहा जिधर ले धर्म की गर्दन घुमाते हैं ॥८॥

५६—पाप की काली घटाएँ

[तर्ज़—कौन कहता है कि जालिम को सजा मिलती नहीं]

पाप की काली घटाएँ छा रही संसार में।
सूझता कुछ भी नहीं अज्ञान के अंधकार में ॥
अधखिले फूलो से कोमल बालकों के व्याह रचा।
बन्द करते हा कुल-क्षय हेतु शयनागार में ॥१॥
मौत के महमान बूढ़े मौड़ बांधे शान से।
बाल विधवा दें बिठा व्यभिचार के बाजार में ॥२॥
रंडियों के चरण चूमे थैलियां अर्पण करें।
धर्मपत्नी को रक्खे नित ठोकरों की मार में ॥३॥

गर्दनें कटतीं धड़ाधड़ पूज्य गोमाताओं की।
आह चया जाते नराधम नित्य के आहार में ॥४॥
शोप झट फोड़े अछूतों से अगर पल्ला भिड़े।
बिल्लियों कुत्तों से लेकिन मुंह चटाते प्यार से ॥५॥
पाप का ताण्डव 'अमर' चारों तरफ ही हो रहा।
डगमगाती धर्म-नौका बह चली मँझधार से ॥६॥

६०—बूढ़े बैल की किसान से पुकार

[तर्ज—हा घटाएं गम की छाई आज दिन]

दुष्ट मालिक ! क्या समाया आज दिन।
क्यों अकारण मुंह चढ़ाया आज दिन ॥१॥
कड़कड़ाती धूप में हल में चला।
रक्त तेरे हित सुखाया आज दिन ॥२॥
गाड़ियां ढो-ढो के कूड़ा खात की।
अस्थि-पंजर तन बनाया आज दिन ॥३॥
रात दिन बढ़ बढ़ के पाला था कुटुम्ब।
हा ! वो सब अहसां भुलाया आज दिन ॥४॥
कुरड़ियों पर चारता चिथड़े फिरूं।
पेट ज़ालिम का सताया आज दिन ॥५॥
थी गनीमत इसमें भी, लेकिन हा !
क्यों कसाई ला बिठाया आज दिन ॥६॥
बूढ़ा होने की सजा, वो क्या कभी,
बाप अपना था बिकाया आज दिन ॥८॥

तुम किसानों की भलाई कैसे हो,
बैल पर खंजर चलाया आज दिन ॥९॥

६१—कठोर-दिल हिंसक

[तर्ज़—दया धर्म का डंका आलम में, बजवा दिया वीर जिनेश्वर ने]

वज्र की छाती बनाई है, इन हिंसा करने वालों ने ।
हृदय से दया हटाई है, इन हिंसा करने वालों ने—टेर॥
गउ माता अति सुखदाई है, जो देती दूध मलाई है ।
उस पर भी छुरी चलाई है, इन हिंसा करने वालों ने ॥१॥
बन में मृग आदि जो चरते हैं, उन पर भी निशाना धरते हैं ।
चुपके से गोली लगाई है, इन हिंसा करने वालो ने ॥२॥
मयूरों को खूब सताते हैं, दरियाव से मछलियाँ लाते हैं ।
गर्दन मुर्गों की उड़ाई है, इन हिंसा करने वालों ने ॥३॥
तीतर मैना और कछुओं को, और खूब वेचते हैं अंडों को ।
जिह्वा को चट्टी बनाई है, इन हिंसा करने वालों ने ॥४॥
मुनि केवल का यह नित कहना, हिंसा को सब ही तज देना ।
प्रभु की वाणी है विसराई, इन हिंसा करने वालों ने ॥५॥

६२—कलियुग की बहार ✓

[तर्ज़—अड़गई अड़गई अड़गई हो, अड़गई जिन्दगी नाल कृष्ण दे]

चल गई चल गई चल गई हो,
चल गई उल्टी हवा जगत में—टेर ॥

पुत्र पिता के वारण्ट कटावें,
माता को डायन बतलावें।
सारी बात बिगड़ गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो०॥१॥

बहु सास को देवे गाली,
जुवा खेल कर उमर गंवाली।
लाज शर्म सब बह गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो०॥२॥

पिता पुत्री के दाम गिनावे,
निर्दयी को कुछ शर्म न आवे।
रस्में कमीनी पड़ गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो० ॥३॥

ऊपर मे तो भक्त कहावें,
अन्दर बढ़ कर जुल्म कमावें।
पाप की बेडी भर गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो० ॥४॥

भाईयों की नहीं शक्ल सुहावे,
कसाईयों से खुद मिलने जावे।
खुदगर्जी चित्त बस गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो० ॥५॥

नहीं मिलता कोई प्रभु का प्यारा,
सच्चा नाम ध्यावनहारा।

नाव भँवर मे फस गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो० ॥६॥
श्री गुरु रामस्वरूप स्वामी,
चरण कमल में नित्य नमामि ।
मुनि अमर की चिन्ता मिट गई हो,
चल गई चल गई चल गई हो० ॥७॥

सुमन संचय

लीडरों की धूम है, और फोलो अरकोई नहीं;
सब तो जनरल हैं यहाँ, आखिर सिपाही कौन है ।
मुँह में गटगट सोडा वाटर, और सिगारों का धुँआं;
जोफ़ की दिल मे शिकायत, राम की अब जां कहां ।
अपने को मारे नहीं, परको मारन जाइ,
दादू आपा मारे बिना, कैसे मिले खुदाइ ।

※ कुव्यसन परिहार ※

६३—तम्बाकू

[तर्ज—सीताराम अयोध्या चुला लो मुझे]

कभी भूल तमाखू तुम पीजो मती
पीने वालों का संग भी कीजो मती—टेर ॥

है बुरी यह चीज़ ऐसी, नहीं खाता खर भी इसे,
इन्सान होकर पीने को तू किस तरह लाता इसे,
इसे जान अशुद्ध चित्त दीजो मती—कभी० ॥१॥

देख पीते और को जाता है वहां पर दौड़ कर,
चाहे जितने कार्य हो पीवेगा सब को छोड़ कर,
ऐसी आदत से हरदम रीझो मती—कभी० ॥२॥

उत्तम से लेकर शूद्र तक की, एक हो जाती चिलम,
शुद्ध रहता नहीं है छोड़ तू मत कर विलम्ब,
अपने कर में चिलम कभी लीजो मती—कभी० ॥३॥

देवा तमाखू दान वो दाता नर्क में जायगा,
देखो पुराण में साफ लिखा है तुम्हें मिल जायगा,
मिले मुफ्त तो भी लीजो मती—कभी० ॥४॥

जाता पैसा गांठ का, होती हैं फिर बीमारियां,
चौथमल कहे छोड़ दो, भारत के नर अरु नारियां
सुनके बात मेरी तुम खीजो मती—कभी० ॥५॥

६४—तमाखू निषेध

[तर्ज—सियाराम अयोध्या बुला लो मुझे]

मतना पीना नशैली तमाखू कभी,
देती सुख ना जरा यह तमाखू कभी—टेर ॥
जहर होता है भयंकर इस तमाखू में सुनो,
नाम जिसका है निकाटोयिन हकीकत सब सुनो,
ज्यादह पीने से प्राणी को मारे कभी—म० ॥१॥
खून हो जाता है पतला, दाग पड़ते सीने में,
फेफड़े कमजोर हो जाते हो सशय जीने मे,
करती सूखा दिमाग तमाखू तभी—म० ॥२॥
रोग होते हैं अनेकों जिनकी कोई हद नहीं,
आँख पीड़ा पेट पीडा, मंदता होती सही,
पूरे डाक्टर हैं जो वे बताते सभी—म० ॥३॥
नष्ट हो जाती है मति कमजोर होती धारणा,
होते हैं पागल भी इससे बात तुम सच मानना,
चक्कर आते है पीते शुरू में तभी—म० ॥४॥
देश की पूरी रकम; बरबाद इसमें जा रही,
धर्म भी सारे अमर निन्दा करें क्यों भा रही,
मत ना देरी करो छोड़ो सारे अभी—म० ॥५॥

६५—शराब [तर्ज—सियाराम अजोध्या बुला लो मुझे]

दारू भूल के पीने न जाया करो ।
पागलपन को खरीद न लाया करो-टेर० ॥

शराब पीने वालों को कुछ भी न रहता भान है।
हैवान कहते हैं सभी, रहता न कोई ज्ञान है।
ऐसे स्थान पर भूल न लाया करो–दारू० ॥१॥
बकता है मुंह से गालियां इन्सान पागल की तरह।
नालियों में आ गिरे, पेशाब कूकर आ करें।
इसके पीने से दिल को हटाया करो–दारू० ॥२॥
मां बहिन का भान वह नर भूल जाता है सभी।
मार देवा जान से तलवार लेके वो कभी।
जुल्म करने से बाज तुम आया करो–दारू० ॥३॥
बदबू निकलती मुंह से शराब पीने से सदा।
अच्छे पुरुष छूते नहीं हाथ से हर्गिज कदा।
वृथा इसमें न धन को लगाया करो–दारू० ॥४॥
गर्म शीशा करके यम दोजख में तुम को पायगा।
साफ लिखा है शास्त्र में, पीछे वहां पछतायगा।
दिल में जोको खतर तुम लाया करो–दारू० ॥५॥
साल सत्यासी में कहे यों, चौथमल सुन लीजियो।
चाहो अगर अपना भला त्यागन इसे कर दीजियो।
मेरी शिक्षा को दिल में जमाया करो–दारू० ॥६॥

६६—हुक्का बुरा है, मत पीवो

[तर्ज—विपत में सनम ने सभालो कमलिया]

बुरा है यह हुक्का कभी भी न पीना,
बुरी गत का सीधा, यह जालिम है जीना ॥१॥

प्रभू नाम जपना तजा भोर उठ कर।
शरम है कि हुक्का लगा मुँह से लीना ॥२॥
बजाते हैं खुश हो, यह गुड़-गुड़ का बाजा।
समझते हैं मूरख, इसी को नगीना ॥३॥
फका फक उड़ाते हैं मुँह में से धूँआ।
जिगर को जलाके, जलाते हैं सीना ॥४॥
अगर जिस तरफ़ देखो, आंख उठा कर।
न कुछ हुक्केबाजों का, जीने में जीना ॥५॥
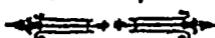
६७—चाय की चाह हटा दो

[तर्ज़—घर छोड कर श्रीराम ने बतला दिया कि यूं]

प्यारे वतन को चाय ने बरबाद कर दिया।
काफी ने तो बिल्कुल हा ! हा ! मुर्दार कर दिया ॥१॥
है आज-कल की सभ्यता में चाय ही सरमौर।
फैशन के भूतों ने इसे विख्यात कर दिया–प्यारे० ॥२॥
दीवारों पे देखी लिखी तुम चाय की तारीफ़।
पैसे के लालच ने बुरा परचार कर दिया–प्यारे० ॥३॥
स्टेशनों पर चाय गर्म की सुनो आवाज़।
बद आदतों ने हिन्द को लाचार कर दिया–प्यारे०॥४॥
कुछ भी नफा इससे नहीं, बतला रहे अंग्रेज।
मर्दानगी के जोश का संहार कर दिया–प्यारे० ॥५॥
सरदी व गरमी रात दिन में बावले बन के।
गरमागरम पी चाय तन का नाश कर दिया–प्यारे०॥६॥

पीना अमर मत ना इसे, तुम भूल कर के कभी।
लाखों लुटा करके वतन कंगाल कर दिया-प्यारे० ॥७॥

६८—(भंग निषेध ड्रामा)

पीने वाला-चलो भंग पियें चलो भंग पियें,इस बिना मूरख यों ही जियें।
विरोधी-मत भंग पियो मत भंग पियो इससे अच्छा है यों ही जियो।

पी०—कुण्डी सोटा बजे दमादम, छने छना छन भंग।
मजा जिन्दगी का जब यारो, हो चुल्लू में दंग-च०॥१॥

वि०—खुश्की लावे अक्ल नमावे, बेसुध करि के डारे।
होश रहे नहीं दीन दु:खी का, बिना मौत ही मारे-म०॥२॥

पी०—तू क्या जाने स्वाद भंग का, है यह रस अनमोल।
मगन करे आनन्द बढावे, दे घट के पट खोल-च०॥३॥

वि०—सर घूमे और नथने सूखें, नींद घनेरी आवे।
फल की याव रही फल ऊपर, भूल अभी की जावे-म० ॥४॥

पी०—भँग नहीं यह शिव की बूँटी, अजर अमर है करती।
जन्म २ के पाप नशा कर, सब रोगों को हरती-च०॥५॥

वि०—भँग नहीं यह विष की पत्तियां,करें मनुज को ख्वार।
जीते जी अंधा कर देती, फिर नरकों दे डार-म० ॥६॥

पी०—कुण्डी में खुद बसे कन्हैया, अरु सोटे में श्याम।
बिजया में भगवान् बसे हैं, रगड़ रगड़ में राम-च० ॥७॥

वि०—लानत इस पर लानत तुझ पर, चल चल हो जा दूर।
भँग पिए भँगी कहलावे अरे पातकी क्रूर-म० ॥८॥

पी० शेर—भँग के अद्भुत मजे को तूँ ने कुछ जाना नहीं।
रंग को इसके जरा भी मूढ़ पहचाना नहीं ॥

आंख में सुरज्ञी का डोरा, मन में मौजों की लहर।
शान्ति औ आनन्द इसके बिन कभी पाता नहीं ॥
चलत—साधु संत भंग सब पीते क्या कंगाल अमीर ।
ईश्वर से लवलीन करावे यह इसकी तासीर—च० ॥ ९ ॥
वि० शेर—है नहीं यह भंग क़ातिल, अक्ल की तलवार है ।
करती है वेहोश ऐसा जानो यह मुरदार है ॥
खौफ जिनको है नर्क का वे इसे छूते नहीं ।
बात सच मानो तो प्यारे यह नर्क का द्वार है ॥
चलत—ये सब झूठी बातें भाई, भँग नर्क में डारे ।
आंखें खोल जगत में देखो लाखों काम बिगारे—म०॥१०॥
पी०—सुन कर यह उपदेश तुम्हारा, हमें हुआ आनन्द ।
लो मैं छोड़ी भंग आज से, ईश्वर की सौगंद—म० ॥११॥
वि०—भला किया यह काम आपने, दई भंग को छोड़ ।
औरों से भी नियम करावो, कुण्डी सोटा फोड—म०॥१२॥
पी०—कुण्डी फोड़ू सोटा तोड़ूं, भंग सडक पर डारूं ।
कोई मत पीना भंग भाइयो, वारम्वार पुकारूं—म०॥१३॥

६६—जुआरी की फज़ीहत (ड्रामा)

[तर्ज—मत भंग पियो मत भग पियो]

जु०— आओ खेलें जुआ २, पल में फकीर अमीर हुआ ।
वि०—मत खेलो जुआ २, आखिर किसी का यह न हुआ ॥टेक॥
जु०—दुर्योधन ने जुआ खेला, जीती पांडव नार ।
पलभर में बन बैठे यारो, परनारी भरतार—आओ ॥ १ ॥

वि०—जुआ जो खेला पांडव गण ने, हारी द्रौपद नार।
राज्य छोड़कर बने बनवासी, वन में हुए खुवार—मत० ॥२॥

जु०—जुएबाज और चोर उचक्के, कौन करे तकरार।
जिधर जावें दौलत पावें, मिलें एक के चार—आओ० ॥३॥

वि०—जुएबाज और चोर उचक्के कौन करे इतबार।
जिधर जावे धक्का खावे, मिलता नहीं उधार—मत० ॥४॥

जु०—जुएबाज के पास जो होता, करता मोज बहार।
घर में ऐश उठावे नारी, मजे करे परिवार—आओ० ॥५॥

वि०—जुएबाज के पास जो होवे, सब कुछ देवे लगाय।
बालबच्चे चाहे भूखे मर जांय, करे नहीं परवाह—मत० ॥६॥

जु०—जो कर जावें जीत जुए में, पीछे मौजें करते।
मखमल के गद्दे पर बैठें, मोटर गाड़ी चढ़ते—आओ० ॥७॥

वि०—जो तुम जाओ हार जुए में पीछे ही क्या करते।
हरदम नानकशाह धरमके डंडे हरथ विच पड़ते—मत० ॥८॥

जु०—सुनी नसीहत तेरी भाई दिल में किया खयाल।
इस पापी चांडाल जुए ने कर दीना कंगाल—मत० ॥९॥

७०—दो मित्रों की बातचीत (ड्रामा)

[तर्ज—मत भंग पियो मत भंग पियो]

म०—जरा सट्टा लगा जरा सट्टा लगा, घर बैठे तू मौज उड़ा।
वि०—मत सट्टा लगा मत सट्टा लगा, कर देगा यह तुमको तबाह।

वि०—सट्टे बाज की कहूँ कहानी, सुनलो मेरे भाई ।
धन तो सारा दिया लुटा, फिर होश जरा ना आई—मत०॥ १ ॥
सट्टे की कुछ कहूँ हकीकत, सुन लो धर के कान,
एक अक जो निकले बस, फिर हो जावे धनवान—जरा०॥ २ ॥
वि०—एक अंक की आशा करते, हो जाते कंगाल ।
जगह जगह पर मारे फिरते, होता बुरा हवाल—मत० ॥ ३ ॥
स०—एक दाव जो आजावे बस, फिर हो मौज बहार ।
एक के बदले मिले कई सौ, क्या अच्छा व्यापार—जरा०॥ ४ ॥
वि०—सट्टे बाज कोई धनी न देखा, सब देखे कंगाल ।
बुरा शौक सट्टे का भाई, कर देता पामाल—मत० ॥ ५ ॥
स०—सट्टे में जो जीत के आवे, पावे ऐश आराम ।
मजे करे परवार जो सारा, क्या अच्छा यह काम—जरा०॥६॥
वि०—सट्टे के शौकीन चो भाई, ढूंढे साधु फकीर ।
सौ सौ गाली सुनकर आवे, क्या उल्टी तकदीर-मत० ।७॥
स०—साधु-सन्त जो गाली देवे, तू क्या जाने यार ।
सट्टे बाज ही अर्थ निकाले, दिल में सोच विचार—जरा० । ८ ॥
वि०—सट्टे में कुछ नहीं भलाई, हट को छोड़ तू भाई ।
सी. एच. लाल कहे तुम से ही, आखिर में दुखदाई—मत० ॥९॥
स०—सुनी नसीहत तेरी भाई, दिल में किया खयाल ।
इस पापी चांडाल सट्टे ने, कर दीना कंगाल नहीं ।
सट्टा लगाऊं नहीं सट्टा लगाऊं कर देता है सबको तबाह-मत०॥ १०॥

७१—सटोरियों की हालत

सट्टे बाजी में खोती है दुनिया,
घरका माल जी ।
पैसा मुफ्त गंवावे भाई,
करते नहीं खयाल जी ॥टेक॥
कोई बाबाजी के जावे,
भर भर के चिलम पिलावे ।
जोड़े हाथ अरु चरण दबावे,
ऐसा हुआ कमाल जी—सट्टे० ॥ १ ॥
बाबाजी भी अब मस्ताना,
ज्योंही माल मुफ्त का खावे ।
बैठे बैठे मौज उडावे.
दुनियां हुई पमाल जी—सट्टे० ॥ २ ॥
बाबा कहते हरफ बतादूं,
अब के बड़े सुधा दिलवादूं ।
घरको बेच के तीया लगा तू,
अब के करूं निहालजी—सट्टे० ॥ ३ ॥
इतनी सुन के घर में आया
जोरू का जेवर उतराया ।
धन सब तीये पे लगाया,
मुतलक करी ना टाल जी—सट्टे० ॥ ४ ॥
फर के सबर बैठ गया भाई,
वहां तीये पर बिन्दी आई ।

चहरे पर जरदी छाई,
विगड़ा सुनते ही हालजी—सट्टे० ॥ ५ ॥
खो कर माल अब घर में आये,
सिर को पीटे और पछताये।
गरदन नीचे को झुकावे,
चलते ढीली चालजी—सट्टे० ॥ ६ ॥
घर में बीवी यों चिल्लाती,
फिकरा घड़के नया सुनाती।
कहां से रोटी प्रिया पकाती,
न घर में आटा दालजी—सट्टे० ॥ ७ ॥
जब बीबी ने खरी सुनाई,
बाबूजी ने मुंह की खाई।
जेब में कोड़ी रही न पाई,
आया महा उबालजी—सट्टे० ॥ ८ ॥
जा फिर बावा को ललकारा,
सुनते ही बावाने फटकारा।
लादो कुछ है भोग हमारा,
पूरा करो सवाल जी—सट्टे० ॥ ९ ॥
बच्चा मालूम भेद तुम्हारा,
तूने सट्टे में सब हारा।
पंजा सत्ता लगा दुबारा,
होगा मालामालजी—सट्टे० ॥१०॥
बेचा लहगा और दुपट्टा,
लगाया अब पंजा सत्ता।

लेकिन फिर भी खुलगया अट्टा,
विलकुल हुआ कंगालजी—सट्टे० ॥११॥
लोटा थाली गिरवी डाला,
अवके वेचन लगा दुशाला ।
वरना विलकुल पिटे दिवाला-
बुरा सट्टे का जाल जी—सट्टे०॥१२॥

७२—सट्टे से बरबादी

[तर्ज—मत भंग पियो मत भंग पियो]

मत कीजो सट्टा २, उड़ जाये सिर के चोटी पट्टा-मत० टेक ॥
सट्टेवाज की कहूं हकीकत, जो कोई उसमें कमावे ।
फिर तो ऐसा इश्क लगे, सब घर का धन लगावे-मत० ॥ १ ॥
रात दिन चिंता रहे घट में, नैन नींद नहीं आवे ।
जो थोड़ी सी आंख लगे तो, स्वपन में दिखलावे-मत० ॥ २ ॥
कहे सेठानी सुनो सेठजी, यह है खोटी चाली ।
पुण्य विना नहीं मिले सम्पदा, क्यों थे चाटो थाली-मत० ॥ ३ ॥
एक आँक आजावे अबके, स्वर्ण का गहना घड़ादूं ।
नख से शिखा तलक पहना के, पीली जर्द बनादूं-मत० ॥ ४ ॥
सट्टे में टोटो लगजावे, घर तिरिया पे आवे ।
गहनो देदे थारो प्यारी, तो इज्जत रह जावे-मत० ॥ ५ ॥
मना किया था थांने पहिले, थां मारी नहीं मानी ।
जो म्हारा गहना लेवोतो, करूं प्राण की हानी-मत० ॥ ६ ॥

जहर खाकर कई मरजावे, कई फांसी को खावे ।
लेणायत दे गाली मुखसे, कैसा कष्ट उठावे-मत० ॥ ७ ॥
गुरु प्रसादे चोथमल्ल कहे, छोड़ो खोटा धन्धा ।
समता रूप अमृत रस पीने, भजन करोरे बन्दा-मत० ॥ ८ ॥

७३—सर्वव्यापी सट्टा

[तर्ज़—मेरे मौला बुलालो मदीने मुझे]

अबतो औरत भी सट्टा लगाने लगी ।
अपने पीहर का नाम बढ़ाने लगी ॥
रात को जो ख्वाब देखा, फौरन लगाया जोड़ तोड़ ।
सट्टा लगाने चल दई, बालक दिया रोता ही छोड़ ॥
घर का पैसा यह मुफ्त गंवाने लगी—अब० ॥ १ ॥
पति की सेवा करनी छोड़ी, बाबाजियों पर जाये हैं ।
हाथ जोड़े रोज और उनके, यह चरण दबाये हैं ॥
उनको माल मुफ्त के खिलाने लगी—अब० ॥ २ ॥
बाल बच्चे और पति को, सूखी रोटी दाल है ।
बाबाजी को हलवा पूड़ी, और उमदा माल है ॥
फक्कड़ लोगों को घर में जिमाने लगी—अब० ॥ ३ ॥
हो रही बेचैन दुनिया, पर न कुछ भी ख्याल है ।
घर में भूखे मर रहे, सट्टे की फिर ना टाल है ॥
यों ही बच्चों को भूखे सुलाने लगी—अब० ॥ ४ ॥

❀ रँग रँगीले फूल ❀

७४—धर्म जागरण [प्रभाती]

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहां जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत है सो खोवत है—टेक॥ १ ॥

टुक नींद से अंखियां खोल जरा,
ओ ! श्री जिनवर से ध्यान लगा।
ये प्रीति करन की रीत नहीं,
जग जागत है तू सोवत है ॥ २ ॥

नादान भुगत अपनी करनी,
ओ पापी पाप में चैन कहां ।
जब पाप की गठरी शीश धरी,
फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है ॥ ३ ॥

जो काल करे सो आज कर,
जो आज करे सो अब कर ले ।
जब चिड़िया ने चुग खेत लिया,
फिर पछताये क्या होवत है ॥ ४ ॥

७५—इसको कहते हैं [ग़ज़ल]

खातिर धर्म के हो जांय, हंसते हंसते जो कुर्बां ।
उमर छोटी या मोटी हो, जवां नर इसको कहते हैं ॥ १ ॥

सलाहे नेक बख्शे जो, है वो इल्म में पूरा ।
न पूछो यह उमर क्या है, बुजुर्गी इसको कहते हैं ॥ २ ॥

बने टापू[1] न गर्दिश में, चलें जो ढाल बन आगे ।
न पूछो नारी है या नर, पेशवा[2] इसको कहते हैं ॥ ३ ॥

बना है फिलसुफा करता, बड़ी बातें अकीदे[3] की ।
हो मौके पर न रौशन, क्या अकीदा इसको कहते हैं ॥ ४ ॥

हविश[4] बाकी न दिल में, जिसके शरवतें[5] दुनियां ।
रहे घर में या जंगल में, उदासो इसको कहते हैं ॥ ५ ॥

चीजें त्याग करते हैं कि, कब्जा है नहीं जिस पर ।
न त्यागें चीज कब्जे की, क्या त्यागी इसको कहते हैं ॥ ६ ॥

करें बद कर्म गर तो, पहुँच जावें, सातवें दोजख[6] ।
करें सत्कर्म पावें मोक्ष, शूरा इसको कहते हैं ॥ ७ ॥

न माना दिल ने लिखवा ली, हैं हमसे चार सतरें ये ।
न मालूम है हमें सचमुच कि, सखुन इसको कहते हैं ॥ ८ ॥

❀ १ द्वीप २ नेता ३ श्रद्धान ४ चाह ५ सांसारिक समृद्धि ६ नरक
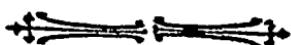
७६—दुनिया में किस तरह रहें ॥

[तर्ज़—या हसीना बस मदीना, करबला में तू न जा]

आदमी को चाहिये, दुनिया में रहना किस तरह ।
जिस तरह तालाब के, पानी में रहता है कमल ॥ १ ॥

साहिबे जर मुफलिसों पर, जर लुटायें किस तरह ।
जिस तरह सूखी जमीं पर, अंबर बरसाता है जल ॥ २ ॥

पाके दौलत है बशर को, रहना वाजिब किस तरह ।
जिस तरह है झुक कर रहे, वह शाख आये जिस में फल ॥३॥

आदमी अपने इरादे का, हो पक्का किस तरह ।
जिस तरह कानून है, तकदीर कुदरत का अटल ॥ ४ ॥

रंजो गम दुनिया के इन्सां, भूल जाये किस तरह ।
जिस तरह वह शख्स, जिसके जेहन में आये खलल ॥५॥

आदमी जाये मुसीबत के, मुकाबिल किस तरह ।
जिस तरह है शेर जाता, सैर में सीने के बल ॥ ६ ॥
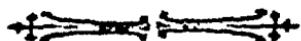
७७—विश्व-विद्यालय

[तर्ज़—घर छोड़ कर श्री राम ने बतला दिया कि यूं]

यह विश्व है विद्यालय तुम छात्र बन जाओ,
जड़ शिक्षकों से सीख लो कुछ योग्य बन जाओ ॥ १ ॥

उदयास्त ज्यों सुख दुःख में सम रूप ही रहकर,
पाखंड तम संहारकारी 'सूर्य' बन जाओ ॥ २ ॥

दीनों को दीजे सांत्वना नित दान-जल बरसा,
निःस्वार्थ जगजीवन-प्रदाता 'मेघ' बन जाओ ॥ ३ ॥

दीखें जहां सज्जन वहीं चरणों मे गिर जाना,
मधु-गन्ध गुण लोभी हठीले भृंग बन जाओ ॥ ४ ॥

निष्पक्ष निर्णय कीजिये सच झूठ का हर दम,
जल दुग्ध में से दुग्ध-ग्राही 'हंस' बन जाओ ॥ ५ ॥

निज शत्रुओ पर भी सदा उपकार ही करना,
पत्थर के बदले फलप्रद 'वृक्ष' बन जाओ ॥ ६ ॥

कालेज तो केवल 'अमर' बी० ए० बनाता है,
लेकिन यहां से शीघ्र ही नर रत्न बन जाओ ॥ ७ ॥

७८—कर्मरेखा की अटलता ॥

(तर्ज—कौम के वास्ते दुःख दर्द उठाया न गया)

कर्म रेखा ना मिटे, लाख मिटाये कोई ।
अक्लो दानिश की, यहाँ पेश न जाये कोई ॥ १ ॥

कर्म के फेर से, रावण ने चुराई सीता ।
जल रही लका इसे, आन बुझाये कोई ॥२॥

कर्म चक्कर से, हरिश्चन्द सा दानी राजा ।
हाय भंगी के बिका, भंगी बुलाये कोई ॥३॥

कर्म होते न अगर, राम क्यों जाते बन को ।
अपनी मर्जी से नहीं, कष्ट उठाये कोई ॥४॥

बेगुनाह होने पै भी, सीता निकाली क्यों गई ।
राम मजबूर हुए, दोष न लाये कोई ॥५॥

कर्म अमेट गति आलिमो फाज़िल मानी ।
शाद फिर कौन यहाँ सरको खपाये कोई ॥६॥

७९—किस्मत ॥

(तर्ज—एक तीर फेंकता जा तिरछी कमान वाले)

एक बाप के दो बेटे, किस्मत जुदा जुदा है ।
एक शाहनशाह जहां था, एक फिर रहा गधा है ॥१॥

मिट्टी जिसम की एक है दो जीव पैदा होते ।
एक तो बना है नारी, एक मर्द बन खड़ा है ॥२॥

हस्ती बशर की एक है, लेकिन ऐमाल दो हैं ।
एक आस्तिक है धर्मी, एक नास्तिक बना है ॥३॥

चान्दी वो एक ही है, उसके बने दो जेवर ।
एक शीस का मुकुट है, एक पांवों का कड़ा है ॥४॥

एक ही सीप से दोनों, मोती हुए हैं पैदा।
एक खरल में पिस रहा है, इक ताज में जड़ा है ॥५॥

एक ही सजर से दोनों; पैदा हुए हैं गुलहा।
एक है महबूबे जन्नत, एक फर्श पर पड़ा है ॥६॥

पत्थर तो एक ही है, हाथों में कारीगर के।
एक की तो होती पूजा, एक फर्श में जड़ा है ॥७॥

वर्षा की बूंद होती, पड़ती है दो के मुख में।
एक सांप जहर उगले, कापूर एक बना है ॥८॥

८०—पापोदय (कव्वाली)

उदय जब पाप आता है, नाच नाना नचाता है।
ये वर्षों की कमाई को, क्षणिक भर में नशाता है ॥टेक॥
न भाई बन्धु रिश्तेदार, न कोई काम आता है।
समझते मित्र थे जिसको, वह आंखें अब दिखाता है—उदय ॥१॥
थी इज्जत आंख में जिसकी, वह अब नफरत जताता है।
भरोसा जिसपै था भारी, धता वोही बताता है—उदय ॥२॥
जलीलो ख्वार दुनिया में, गजब ऐसा बनाता है।
कि आत्मघात कर डालूं, यही बस दिल को भाता है—उदय ॥३॥

त्रिखण्डी भूप को भी जब, करम आकर सताता है।
न खाने को मिले दाना, न जल पीने को पाता है—उदय ॥४॥

बुरा जिससे हुआ तेरा, उसे दुश्मन बनाता है।
निमित्त कारण फक़त है वह, क्यों उसपे रोश खाता है—उदय ॥५॥

यह निज कर्मों का फल सब है, न दुःख का कोई दाता है।
जो समतामें सहन कर ले, वही शिव सुख को पाता है—उदय ॥६॥

८१—अविद्या

[तर्ज—सांपने मुझको डस लिया]
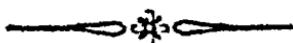
अरी अविद्या ये क्या किया, हाय सितम ग़जब सितम।
भारत को गारत कर दिया, हाय सितम गजब सितम ॥१॥
दया जो धर्म जैन का, दुनियाँ से जाता है चला।
पाखंड सारा बढ़ गया, हाय सितम गजब सितम ॥२॥
प्यारी कहाँ गई दया, जल्दी से अब तो लौट आ।
गौवों पे जुल्म हो रहा, हाय सितम गजब सितम ॥३॥
कुरीतियों ने कर दिया, देश सारा ये तबाह।
हुई हमार दुर्दशा, हाय सितम गजब सितम ॥४॥
वो जैन वीर हैं कहाँ, जो धर्म हेतु देत जाँ।
वंश उनका उठ गया, हाय सितम गजब सितम ॥५॥

शिव राम अब तो हो खड़ा, परमाद में क्यों तू पड़ा।
पाखण्ड सारे बढ़ गये, हाय सितम ग़ज़ब सितम ॥६॥

८२—चाह

[तर्ज—इधर भी नजर हो जरा वन्सी वाले]

महावीर स्वामी! मैं क्या चाहता हूँ।
फ़कत आपका आसरा चाहता हूँ ॥टेर॥

मिली तुमको पदवी जो निर्वाण पद की।
कि तुम जैसा मैं भी हुआ चाहता हूँ—महा० ॥१॥

फंसा हूँ मैं चक्कर में आवागमन के।
मैं अब इससे होना रिहा चाहता हूँ—महा० ॥२॥

दया कर दया कर तू मुझ पर दयालु।
क्षमा चाहता हूँ क्षमा चाहता हूँ—महा० ॥३॥

बुरा हूँ भला हूँ अधम हूँ कि पापी।
दया कर तू मुझपे दया चाहता हूँ—महा० ॥४॥

कहूँ क्या ये तुमसे मैं क्या चाहता हूँ।
मैं सारे जहाँ का भला चाहता हूँ—महा० ॥५॥

तमन्ना यही है यही आरज़ू है।
ऐ स्वामी! तुम्हें देखना चाहता हूँ—महा० ॥६॥

महावीर स्वामी मैं हूँ दास तेरा ।
कृपा कर शरण दो दया चाहता हूं—महा०.॥७॥

८३—पश्चात्ताप [देश]

मो सम कौन कुटिल खल कामी—टेक ॥
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो नमक हरामी ॥मो० ॥१॥
भरि भरि उदर विषय को धावे, जैसे सूअर ग्रामी ॥मो० ॥२॥
हरिजन छांड़ हरि विमुखन की, निशदिन करत गुलामी ॥मो० ॥३॥
पापी कौन बड़ो है मोतैं, सब पतितन में नामी ॥मो० ॥४॥
सूर पतित को ठौर कहां है, सुनिये श्रीपति स्वामी ॥मो० ॥५॥

८४—भक्त कबीर की चादर (राग सोरठ)

चादर झीणी राम झीणी, सदा भक्ति रस भीनी—टेक

अष्ट कमल दल चरखा चलता, पांच तत्त्व कर पिंडी राम ।
नव-दस मास वणन में लागा, मूरख मैली कीनी ॥ चादर० १ ॥

जब मेरी चादर बन कर आई, घर धोबी को दीनी राम ।
मोह शिला पर पटक पछाड़ी, घेरी गंदी कीनी ॥ चादर० ॥ २ ॥

जब मेरी चादर धुप कर आई, गुरु राज को दीनी राम ।
प्रभुभक्ति को रंग लगाके, घेरी रंगत कीनी राम ॥ चादर० ॥ ३ ॥

ध्रुव प्रह्लाद विभीषण ओढ़ी, शुकदेव निर्मल कीनी राम ।
दास कबीरे ओढ़ी युगत से, ज्यों की त्यों धर दीनी राम ॥ चादर० ॥ ४ ॥
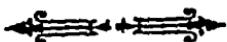
८५—भावना

('तर्ज—भावना दिन रात मेरी, सब सुखी संसार हो)

रात दिन है भावना, सारा सुखी संसार हो ।
जिन धर्म का प्रचार हो, सब जीवों का उद्धार हो ॥ टेक ॥

हो न हिंसा रंच भर, अरु सत्य का व्यवहार हो ।
चोरी जारी हो नहीं, संतोष शील अपार हो ॥ भा० ॥ १ ॥

त्याग दें सब क्रोध को, नहीं मान अश्व सवार हो ।
नहीं छल का अब व्यापार हो, न लोभ भी दुःखकार हो ॥ भा० ॥ २ ॥

जितने जग के जीव हैं, सब से सभी का प्यार हो ।
गुणी जनों को देख कर, हिये में हर्ष अपार हो ॥ भा० ॥ ३ ॥

दुःखी जनों को देखकर, चित्त में दया का संचार हो ।
दुष्ट पापी जीव से, माध्यस्थ भाव विचार हो ॥ भा० ॥ ४ ॥

देश में वरते कुशल, राजा प्रजा हितकार हो ।
कहते बीमारी भगे, सुख शान्ति का विस्तार हो ॥ भा० ॥ ५ ॥

शास्त्र का अभ्यास हो, अरु संगति सुखकार हो ।
संत जन के गुण ग्रहूँ, प्रिय वन आत्म विचार हो ॥ भा० ॥ ६ ॥

शिवराम जीवन धन्य हो, मुझमें जो परउपकार हो ।
तन से मेरे सार तप हो, इस जग से बेड़ा पार हो ॥ भा० ॥ ७ ॥

८६—सत्संग

(तर्ज़—दिल के मन्दिर में रचा लो, मूरति भगवान की)

लाखों पापी तिर गये, सत्संग के परताप से ।
छिन में बेड़ा पार है, सत्संग के परभाव से ॥ टेर ॥

सत्संगका दरिया भरा, कोई नहा ले इसमें आनकर ।
कट जाय तनके पाप सब, सत्संग के परभाव से ॥ १ ॥

लोह का कंचन बने, पारस के परसंग से ।
लटकी भँवरी होती है, सत्संग के परताप से ॥ २ ॥

राजा परदेशी हुआ, कर खून में रहते भरे ।
उपदेश सुन ज्ञानी हुआ, सत्सँग के परताप से ॥ ३ ॥

सँयति राजा शिकारी, हिरन को मारा था तीर ।
राज्य तज साधु हुआ, सत्संग के परताप से ॥ ४ ॥

अर्जुन मालाकार ने, मनुष्यों की हत्या करी ।
छ मास में मुक्ति गया, सत्संग के परताप से ॥ ५ ॥

एलायची एक चोर था श्रेणिक नामा भूपति ।
कार्य सिद्ध उनका हुआ, सत्संग के परताप से ॥ ६ ॥

सत्संग की महिमा बड़ी है, दीन दुनियां बीच में ।
चोथमल कहे हां भला, सत्संग के परताप से ॥ ७ ॥
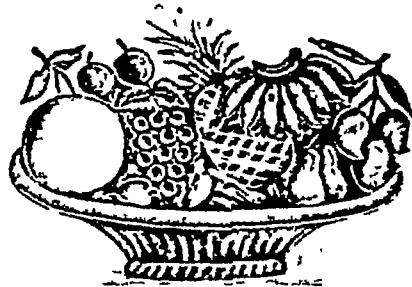
सुमन संचय

मति फिर जाय विपत्ति में, राव रंक इक रीत;
हेम हरिन पाछे गये, राम गंवाई सीत ।

ज्यों नाचत कठ पूतरी, करम नचावत गात;
अपने हाथ रहीम त्यों, नहीं आपुने हाथ ।

असन वसन सुन नारिसुख, पापिहुँके घर होई;
सन्त समागम प्रभु कथा, तुलसी दुर्लभ दोई ।

समिति के स्तम्भ संरक्षक

और

आजीवन सदस्यों की शुभ नामावली

स्तम्भ

१. दानवीर सेठ अगरचंदजी, भैरोंदानजी सेठिया, बीकानेर।
२. लाला केदारनाथजी, रुगनाथजी जैन, दिल्ली।

संरक्षक

१. श्रीमान् सरदारमलजी, सा० पुंगलिया, नागपुर।

आजीवन सदस्य

१ श्री चुन्नीलाल, माईचन्द मेहता	बम्बई
२ श्री चुन्नीलाल, फूलचन्द दोसी	मोरवी
३ श्री लाला सुखदेवसहाय, ज्वालाप्रसाद	कलकत्ता
४ श्री मुंशीलालजी जैन	स्यालकोट
५ श्री टी० जी० शाह	बम्बई
६ श्री दुर्लभजी त्रिभुवनजी जौहरी	जयपुर
७ श्री राम लालजी कीमती	हैदराबाद